वैदिक संस्कार

कनिष्ठ सहायक

व्यावसायिक पाठ्यक्रम स्तर 2.5

राष्ट्रीय व्यावसायिक शिक्षा और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा मान्यता प्राप्त

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in

वैदिक संस्कार कनिष्ठ सहायक

प्रधान सम्पादक

प्रो. विरूपाक्ष वि. जड्डीपाल्

सचिव

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद संस्कृत शिक्षा बोर्ड

लेखकगण

श्री स्वप्निल मोहनराव पाठक
घनान्त (शिक्षक शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिन)

श्री आनन्द रत्नाकर जोशी
घनान्त (शिक्षक शुक्लयजुर्वेद काण्व)

डॉ. गोविन्द प्रसाद शर्मा, ज्योतिषाचार्य
एम०ए०, एम० फिल०, पी०एचडी०(शैक्षिक सहायक)

प्रधान संयोजक

डॉ.अनूप कुमार मिश्र

सहायक निदेशक, प्रकाशन एवं शोध अनुभाग

आवरण एवं सज्जा : श्री शैलेन्द्र

तकनीकी सहयोग एवं टङ्कण : श्री नरेन्द्र सोलंकी

© महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जयिनी

ISBN :
मूल्य :
संस्करण : 2024
प्रकाशित प्रति PDF
प्रकाशक : महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रिय वेदविद्या प्रतिष्ठान
(शिक्षामन्त्रालय, भारत सरकार की स्वायत्तशासी संस्था)
वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - 456006 (म.प्र.)
Email: msrvvpujn@gmail.com, Web: msrvvp.ac.in
दूरभाष (0734) 2502255, 2502254

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की पाठ्यचर्या एवं राष्ट्रीय कौशल भारत मिशन का उद्देश्य शिक्षण विकास एवं प्रशिक्षण के द्वारा शिक्षार्थियों का सर्वांगीण विकास कर रोजगार प्रदान करना है। महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान उज्जैन सदैव शैक्षिक नवाचार के क्षेत्र में अग्रसर रहा है अतः आदर्श वेद विद्यालयों, पाठशालाओं एवं भारत के विद्यालयों में वैदिक कौशल विकास शिक्षण एवं प्रशिक्षण के द्वारा अनेकानेक गतिविधियों के माध्यम से शिक्षार्थियों को रोजगार के अवसर प्रदान कर रहा है, जिससे शिक्षार्थी प्रशिक्षण के ज्ञानार्जन द्वारा स्वयं को अद्यतन एवं जागृत कर सकेंगे तथा इसके विषय ज्ञान का लाभ अपने दैनन्दिन जीवन के साथ-साथ आजीविका प्राप्त कर राष्ट्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे।

वैदिक संस्कार कनिष्ठ सहायक पाठ्यपुस्तक में इकाईयों के विषयों को विविध आयामों के साथ सहज एवं प्रभावी तरह से प्रस्तुत किया गया है लेकिन फिर भी **कोई दोष हों तो हमें सूचित अवश्य** करें क्योंकि हमारा परम उद्देश्य वैदिक सिद्धान्तों के आधार पर वैदिक ज्ञान को कौशल विकास के माध्यम से जन-जन पहुँचाना है। अतः पाठ्य पुस्तकों की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए विद्वानों के समस्त सुझावों का स्वागत है।

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन

प्राक्कथन

संस्कार दो प्रकार के होते हैं- देव संस्कार और ब्रह्म संस्कार, **"द्विविधो हि संस्कारो भवति ब्राह्मो दैवश्चेति"**।। (हारीतस्मृति) **"गर्भाधानादि स्मार्तोः ब्राह्म स्नानान्त इति"**। (हारीत) गर्भाधानादि षोडश संस्कारों को ब्रह्म संस्कार कहा जाता है। **"पाकयज्ञा हविर्यज्ञाः सौम्याश्च देवा इति"**। हारीत् पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ सोमयज्ञादि प्रत्येक सप्त- सप्त याग देव संस्कार हैं। इन दोनों प्रकार के संस्कारों से संस्कृत द्विजाति त्रिविध तापों से (आधिभौतिक, आध्यात्मिक, आधिदैविक) विमुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करता है।

यह वैदिक संस्कार ग्रन्थ अध्ययन कर्ताओं के लिए सुलभ सोपान है, इस पुस्तक में मुख्यतः तीन संस्कारों का प्रयोग दिया हैं और तत्सम्बन्धित विषयों का परिचय भी प्रस्तुत किया गया है।

प्रथम इकाई में वेद परिचय, शाखाओं का परिचय। द्वितीय इकाई में प्रत्येक शाखा के गृह्य एवं सूत्रान्तर्गत प्रतिपादित विषय। तृतीय इकाई में वैदिक संस्कार परिचय संस्कार शब्द का अर्थ एवं उनके उद्देश्य और प्रारम्भिक परिचय। चतुर्थी इकाई में वैदिक दिनचर्या, पाँचवीं इकाई में संस्कारों की पूजन विधि तथा पूर्वसिद्धता गणेशादि पूजन से नांदीश्राद्धान्त पंचाङ्ग पूजन। षष्ठ इकाई में जातकर्म संस्कार एवं काल निर्णय, शिशु को सुवर्ण शलाका से त्रिमधु प्रासन्न एवं जननशौच निर्णय। सप्तम इकाई के अन्तर्गत नामाकरण संस्कार, चतुर्विध नाम और महत्त्व। आठवीं इकाई में संस्कारों के मुहूर्त्त सम्बन्धी ज्ञान के लिए पंचाङ्ग परिचय, संस्कारों के शुभाशुभ मुहूर्त्त का परिज्ञान (तिथि,वार,नक्षत्र,योग एवं करण)। दशम इकाई में जातकर्मादि संस्कारों का मूल प्रयोग पाठ एवं सूत्रपाठ तथा पूजन विधि प्रयोग आदि समाहित है।

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान द्वारा राष्ट्रीय व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद् के मान्यता प्राप्त अनुभवी संगठनों के द्वारा वेद सम्बन्धी छात्रों को रोजगारोन्मुखी कौशल विकास प्रशिक्षण देने हेतु यह योजना प्रारम्भ की है। इस योजना का सभी वेदप्रेमियों को लाभ हो एवं वेदों का उत्तरोत्तर प्रचार हो ऐसी वेदभगवान के चरणों में प्रार्थना।

आनन्द रत्नाकर जोशी

।। श्रीः।।

इकाई-1 वेद परिचय

1.1 **वेद शब्दार्थ**- वेद शब्द का अर्थ ही है ज्ञान और इस तरह वेद सकल ज्ञान-विज्ञान की निधि हैं। परा और अपरा दोनों विद्याओं का निरूपण करते हैं यही मनु का उद्घोष है कि सर्वज्ञानमयो हि सः' (सः) वह वेद (सर्वज्ञानमयः) सभी प्रकार के ज्ञान से युक्त हैं। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन वेदों से ओतप्रोत है। धर्म, खगोल विज्ञान, गणित, मौसम विज्ञान, अर्थशास्त्र, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, चिकित्सा, प्रौद्योगिकी, कृषि, दर्शन, योग, शिक्षा, काव्यशास्त्र, व्याकरण, भाषा विज्ञान, राजनीतिशास्त्र, शिल्पशास्त्र, सैन्यप्रशिक्षण आदि विषय वेदों में उपलब्ध है। इनकी उपयोगिता सार्वकालिक, सार्वदेशिक एवं सार्वजनक है अतः इन वेदों के अध्ययन पर बल दिया गया और भौतिक विज्ञान के इस अत्यन्त समुन्नत युग में भी वेदों के कारण आज भी हमारी भारतीय संस्कृति संसार में पूजनीय ही नहीं विश्वगुरु के महनीय पद पर प्रतिष्ठित है, जिसके द्वारा धर्म-अर्थ-काम-मोक्षादि-पुरुषार्थ-चतुष्टय की सिद्धि होती है वही वेद है। "विद् - ज्ञाने' इति धातोः घञ्-प्रत्यय से निष्पन्न यह वेद शब्द ज्ञान राशि, ज्ञान का द्योतक है। व्याकरण के अनुसार शब्दार्थ का निर्णय करें तो वेद शब्द की निष्पत्ति सत्ता, ज्ञान, विचार और लाभ इन चार धातुओं निष्पन्न कर सकते हैं। जैसा कि सिद्धान्तकौमुदी में वर्णन हैं-

सत्तायां विद्यते ज्ञाने वेत्ति विन्ते विचारणे।

विन्दते विन्दति प्राप्तौ ॥

- **विद् सत्तायाम् (दिवादि-गणे)**- जिसके द्वारा वस्तु के यथार्थ स्वरुप का ग्रहण हो, वही वेद है।
- **विद् ज्ञाने (अदादि-गणे)** - जिसके द्वारा धर्म एवं ब्रह्म का ज्ञान हो, वह वेद है।
- **विद् विचारणे (रुधादि-गणे)** –जिसके द्वारा धर्म और ब्रह्म का विचार किया जाए, वह वेद है।
- **विद्लृ लाभे (तुदादि-गणे)**- जिसके द्वारा ब्रह्म के स्वरूप का ज्ञान हो, वह वेद है।

वेद के पर्यायवाची - यथा- (1) श्रुतिः (2) निगमः (3) आगमः (4) त्रयी (5) छन्दः(6) स्वाध्यायः (7) आम्नायः।

शब्दार्थ की तरह अनेक विद्वानों ने वेद शब्द के नाना अर्थ भी प्रदान किए हैं यथा-

आचार्य सायण-

- ❖ अपौरुषेयं वाक्यं वेद:।
- ❖ इष्ट प्राप्ति अनिष्ट परिहारयोः अलौकिकम् उपायं यः ग्रन्थो वेदति स वेदः ।

आचार्य यास्क-पुरुषविद्याऽनित्यत्वात् कर्मसम्पत्तिर्मन्त्रे वेदे।

स्वामी दयानन्दसरस्वती- विन्दन्ति जानन्ति विद्यन्ते भवन्ति विन्ते विचारयन्ति विदन्ते लभन्ते सर्वे

प्रातिशाख्यम्- विद्यन्ते धर्मादयः पुरुषार्था यैः ते वेदाः।

आचार्य आपस्तम्ब- मन्त्रब्राह्मणयोः वेदनामधेयम्।

1.2 **वेदों के उपवेद**- ऋग्वेद का उपवेद वैद्यविद्या बोधक 'आयुर्वेद', यजुर्वेद का उपवेद शस्त्रविद्या विषयक 'धनुर्वेदः', सामवेद का उपवेद गानविद्या अवबोधक ' गान्धर्ववेदः' एवं अथर्ववेद का उपवेद शिल्पविद्या अवबोधक 'स्थापत्य वेद ' है।

1.3 **वेदों का अपौरुषेयत्व** - वेद भारतीय एवं विश्व साहित्य के उपलब्ध सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, इनसे पहले का कोई भी अन्य ग्रन्थ अब तक प्राप्त नहीं हुआ है। अतः कहा जाता है कि वेद सम्पूर्ण संसार के पुस्तकालयों की पहली पोथी हैं और भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के तो वेद प्राचीनतम एवं सर्वाधिक मूल्यवान् धरोहर हैं, हमारे स्वर्णिम अतीत को अच्छी तरह प्रकाशित करने वाले विमल दर्पण वेद ही तो हैं।

वेदों का स्वरूप-

वेद अपौरुषेय एवं नित्य हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार इन वेदों की रचना नहीं हुई है बल्कि हमारे पूर्वज ऋषियों ने अपनी सतत साधना तपश्चर्या से ज्ञान राशि का साक्षात्कार किया है और प्रत्यक्ष दर्शन करने के कारण इनकी संज्ञा 'ऋषि' है-ऋषिर्दर्शनात् (दर्शनात्) दर्शन, साक्षात्कार करने के कारण (ऋषिः) ऋषि कहते हैं। ऋषयोः मन्त्रद्वष्टारः (मन्त्रद्रष्टारः) मन्त्रों को देखने वाले (ऋषयः) ऋषिलोग युग के प्रारम्भ में हुए। अर्थात् साक्षात्कृतधर्माणः ऋषयो बभूवुः (साक्षात्कृतधर्माणः) धर्म-धारकतत्त्व सत्य का साक्षात्कार करने वाले (ऋषयः) ऋषिलोग (बभूवुः) युग के प्रारम्भ में हुए। प्रत्यक्ष किए जाने के कारण वेद प्रतिपादित ज्ञान सर्वथा संदेहरहित निर्दोष, अत एव प्रामाणिक हैं। इनमें किसी भी प्रकार के मिथ्यात्व की सम्भावना नहीं है। अतः वेदों का स्वतः प्रामाण्य है, अपनी पुष्टि प्रामाणिकता के लिए वेद किसी के

आश्रित नहीं हैं। वेदों का सर्वाधिक महत्त्व इसी बात में है कि इनके द्वारा स्थूल-सूक्ष्म निकटस्थ दूरस्थ, अन्तर्हित व्यवहित, साथ ही भूत, वर्तमान, भविष्यत् त्रैकालिक समस्त विषयों का नि:संदिग्धा निश्चयात्मक ज्ञान होता है। अतः भगवान् मनु ने वेदों को सनातन चक्षु कहा है। यह अनुपम ज्ञाननिधि सुदूर प्राचीन काल से आज तक अपने उसी रूप में सुरक्षित चली आ रही है। इसमें एक भी अक्षर यहाँ तक कि एक मात्र का भी जोड़ना-घटाना सम्भव नहीं है। आठ प्रकार के पाठों से यह वेद पूर्णतः सुरक्षित है।

1.4 वेदों का महत्त्व एवं वेदाध्ययन की उपयोगिता- भौतिक विज्ञान के इस प्रकर्ष युग में वेद सर्वथा प्रासंगिक हैं। इनका अध्ययन सर्वतोभावेन-सभी प्रकार से उपयोगी है, क्योंकि मानव का सम्पूर्ण जीवन वेदों से अनुप्राणित ओतप्रोत है। मनुष्य का मुख्य प्रयोजन है सुख की प्राप्ति और इसकी सिद्धि में वेद सर्वथा उपकारक हैं। वेदों के सुप्रसिद्ध व्याख्याकार आचार्य सायण का कथन है कि इष्ट की प्राप्ति तथा अनिष्ट के परिहार के उपाय वेदों में ही मिलते हैं। इस तरह लौकिक अभ्युदय तथा निःश्रेयस दोनों प्रयोजनों की सिद्धि वेदों से होती है। वास्तव में वेद एक सुव्यवस्थित समन्वित जीवन परियोजना प्रस्तुत करते हैं। एक-एक दिन का खण्ड-खण्ड करके नहीं, अपितु मानव जीवन की समग्रता व सम्पूर्णता पर यहाँ विचार किया गया है। केवल वर्तमान जीवन को सुखी बनाना ही उद्देश्य नहीं है, अपितु भावी जीवन को और अधिक सुखमय बनाना है, अमृतत्व की प्राप्ति करना है और वेद तो अमृतत्वसिद्धि के संविधान हैं। मृत्यु के भय से छुटकारा दिलाकर वेद ही हमें अमरता का बोध कराते हैं।

अमृतपुत्रा वयम् - हम सभी अमृतपुत्र हैं। इस प्रकार वेद परमसुखमयी आह्लादमयी जीवन दृष्टि प्रस्तुत करते हैं: **इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् । क्रीळन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे॥** (ऋग्वेद 10.85.42) विवाह के पवित्र माङ्गलिक अवसर पर नव दम्पती को प्रदान किया गया यह शुभ आशीर्वचन है। यह संसार सुखमय है। सुख प्राप्ति के लिए इसे छोड़ कर कहीं अन्यत्र जाने की आवश्यकता नहीं है। सभी प्रकार का वास्तविक सच्चा सुख यहीं पर है। हे यजमानदम्पति! तुम दोनों (इह-एव) यहीं पर (स्तम्) रहें। (मा) मत (वियौष्टं) वियुक्त अलग हों। (विश्वम् आयुः) सम्पूर्ण आयु 100 वर्ष (वि अश्नुतम्) प्राप्त करों। (पुत्रैः) पुत्रों के साथ (नृप्तृभिः) पौत्रं के साथ (क्रीडन्तौ) खेलते हुए (मोदमानौ) प्रमुदित होते हुए (स्वे गृहे) अपने गृह में (स्तम्) रहो। रुग्ण दुःखी-दीन होकर नहीं अपितु बलवान् बलिष्ठ अंगों से बराबर

कार्य करते हुए 100 वर्ष तक जीवित रहने की कामना की गई है। **जीवेम शरदः शतम्** (शरदः शतम्) सौ वर्ष (जीवेम) हम जीवित रहें।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ।। (ऋग्वेद 1.89.8)

(देवाः) हे देवगण (कर्णेभिः) कानों से (भद्रं) मंगल-शुभ (शृणुयाम) हम सुनें। (यजत्राः) हे यजनीय-पूजनीय देवगण (अक्षिभिः) आँखों से (भद्र) मंगलशुभ (पश्येम) हम देखें। (स्थिरैः अंगै तनूभिः।) बलिष्ठ अंगो से युक्त शरीरों से (तुष्टुवांसः) प्रार्थना करते हुए (देहहितं) देव-निर्धारित (यद् आयुः) जो (सौ वर्ष की) आयु है (वि-अशेम) हम अच्छी तरह प्राप्त करें अर्थात् इस अवधि में रोगी न होवें, बराबर नीरोग रहें और ऋषि कामना करते हैं कि कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः (इह) इस लोक संसार में (कर्माणि) (निर्धारित) कार्यों को (कुर्वन् एव) करते हुए-सम्पन्न करते हुए (शतं समाः) सौ वर्ष तक (जिजीविषेत्जीवित रहने की इच्छा करनी चाहिए और केवल 100 वर्ष तक ही नहीं, अपितु इससे भी अधिक जीवित रहने की बात कही गई है - भूयश्च शरदः शतात् (शतात् शरदः भूयः) और सौ वर्ष से अधिक जीवित रहें।

हमारे वैदिक ऋषियों ने तो विश्वायु विश्वधात्री विश्वकर्मा, जबतक चाहे तब तक जीवित रहने की, सब कुछ धारणा करने की और सब कुछ करने की बात कही है। वास्तव में मानव-शरीर कर्मभूमि है और कर्म ही जीवन है तथा सिद्धिः कर्मजा-विजयश्री की प्राप्ति कर्म से होती है, अतः कर्म करने पर बल दिया गया है तथा कार्य को कभी भविष्य के लिए नहीं टालना चाहिए क्योंकि मनुष्य के कल की बात को कौन जानता है।

न श्वः श्वमुपासीत। को हि मनुष्यस्य श्वो वेद। ऋषि अथर्वन् का बहुत ही प्रेरणास्पद कथन है कि हमारा यह शरीर ही देवपुरी अयोध्या है, इसमें सभी देवता निवास करते हैं, यह अपराजेय ज्योतिर्मय है। इस पुरी में स्थित आत्मा ही परमदेव, परमात्मा है। इस पुरी का राजा है -**अष्टचक्रा नवद्वारा देवानांपूरयोध्या** (अष्टचक्रा) आठ चक्रों (नवद्वारा) नव द्वारों वाला हमारा यह शरीर ही (देवानां) देवताओं की (पूः) पुरी (अयोध्या) अयोध्या-अपराजेय है। इसलिए यह शरीर सर्वतोभावेन रक्षणीय है, इसको स्वस्थ एवं स्वच्छ बनाए रखना है।

मनुष्यशरीर की ब्रह्माण्ड, यज्ञशाला, ऋषि आश्रम, तीर्थ एवं स्वराज्य रूप में अवधारणा वेदों के सुप्रख्यात व्याख्याकार पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने अपनी व्याख्या में मानवशरीर को ही विशेष महत्त्व प्रदान किया है। सकल ब्रह्माण्ड अंश रूप में इस शरीर में विद्यमान है। अतः जो कुछ ब्रह्माण्ड में है, वह इस शरीर में भी है। हमारा शरीर ही यज्ञशाला है। शरीर के भीतर होने वाली समस्त क्रियाएँ यज्ञीय क्रिया-कलापों के समान हैं। मानव शरीर ही ऋषियों का आश्रम एवं तीर्थ स्थल है। इस प्रकार से उन्होंने शरीर की पावनता पर बल दिया है। भावों, विचारों तथा ज्ञान से अपने इस शरीर की पवित्रता को बनाए रखना है।

सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्तरक्षन्ति सदमप्रमादम्॥ (यजुर्वेद 34.55)

(शरीरे) मानव शरीर में (सप्त ऋषयः) सप्त ऋषि (प्रतिहिता) स्थापित विद्यमान हैं। (सप्त) सातों ऋषि (सदम्) शरीर रूपी घर की (अप्रमादम्) बिना प्रमाद के सावधानीपूर्वक (रक्षन्ति) रक्षा करते हैं।

पं. सातवलेकर ने मानव शरीर को अपना स्वराज्य बतलाया है। यह शरीर ही रत्नादि से परिपूरित अपराजेय देव पुरी अयोध्या है और स्वकीय आत्मा ही इस स्वराज्य का राजा है। शरीर रूपी यह स्वराज्य सभी को सहज स्वाभाविक रूप से प्राप्त है। धनवान अथवा निर्धन हो, सभी व्यक्तियों का अपना स्वराज्य है और आत्मा रूपी राजा का शासन इस पर चलना चाहिए। इस प्रकार मनुष्य को अपने शरीर के महत्त्व का बोध कराया गया है।

वेदों में पारिवारिक/सामाजिक जीवन दृष्टि- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह एकाकी, अकेले नहीं, अपितु परिवार में, समाज में रहता है और सुखमय जीवनयापन करना मनुष्य की सहज स्वभाविक अभिलाषा होती है। एतदर्थ वेदों में पारिवारिक एवं सामाजिक व्यवस्था का बहुत ही सुन्दर चित्रण किया गया है। सुख समृद्धि की प्राप्ति हेतु ही ऋषियों ने चार प्रत्यक्ष देवों को प्रस्तुत किया है। देव का अभिप्राय ही है जिनसे हमें वांछित फल की प्राप्ति होती है। देवों दानात् (दानात) दान, इच्छित फल प्रदान करने के कारण ही (देवः) देव (कहते हैं)। प्रत्यक्ष देवता चार (4) हैं -

1. माता
2. पिता
3. आचार्य
4. अतिथि

मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षावल्ली में विद्याध्ययन की सम्पूर्ति पर गुरुकुल से घर जाने वाले छात्रों को दिया गया यह उपदेश सभी मनुष्यों को इन प्रत्यक्ष देवों की सेवा शुश्रूषा के लिए प्रेरित कर रहा है। पारिवारिक-सामाजिक बन्धन को सुदृढ़ एवं प्रगाढ़ कर रहा है। इनकी सेवा करने से निश्चित रूप से अभीष्ट की सिद्धि होती है।

सच्चा सुख तो वास्तव में परिवार में है। अकेले रहने में कोई सुख नहीं है। अतः भगवती वेद श्रुति कहती है कि प्रारम्भ में वह परमात्मा अकेला था, उसे कुछ अच्छा नहीं लगा- **एकाकी स न रेमे**

तत्पश्चात् उन्होंने पुनः संकल्प किया कि मैं अकेला हूँ, बहुत हो जाऊँ, प्रजाओं की सृष्टि करू **एकोऽहं बहु स्याम, प्रजायेय** इस तरह उस एक परमात्मा ने आत्मरमणार्थ, क्रीडा के लिए नामरूपात्मिका इस सृष्टि की रचना की। सृष्टि की रचना करके वह परमात्मा इसमें प्रवेश कर गया, इसलिए सच्चिदानन्द परमात्मा से उद्भूत यह सृष्टि आनन्द बहुला है - **तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्रावशत्** (वह परमात्मा) (तत् सृष्ट्वा) उस जगत् की रचना करके (तद् एव अनु प्र-अविशत्) उसी में प्रवेश कर गया। (सर्वं खल्विदं) ब्रह्म, (इदं सर्वं) यह सब कुछ (खलु) निश्चित रूप से (ब्रह्म) ब्रह्म है, इसका यही अभिप्राय है कि सच्चा सुख जो प्रत्येक मनुष्य को अभीष्ट है, गृहस्थ जीवन में है एवं वेद गृहस्थ जीवन का बहुत ही रमणीय वर्णन प्रस्तुत करते हैं कुटुम्ब के सभी सदस्यों में परस्पर सौहार्द सौमनस्य सहयोग का भाव होवे, प्रेमपूर्वक मधुर वाणी बोलते हुए मिलजुल कर एक साथ रहने की, एक साथ चलने तथा मिल कर कार्य करने के निर्देश वेदों में प्राप्त होते हैं। सभी का भोजन एक साथ हो, आपस में द्वेष-अलगाव की भावना न हो और इस प्रकार अभीष्ट लक्ष्य को सिद्ध करने के लिए प्रेरित किया गया है। माता-पिता, भाई-बहनों और पत्नी के परस्पर व्यवहार की विधि-रीति वेदों से प्राप्त होती है -

अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।

जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम् ।।(अथर्ववेद 3.30.2)

(पुत्रः) पुत्र (पितुः) पिता के (अनुव्रतः) अनुकूल आचरण वाला (भवतु) हो। (मात्रा) माता (संमनाः) सभी सन्तानों के प्रति समान मन-स्नेह वाली (भवतु) हो (जाया) पत्नी (पत्ये) पति के प्रति (मधुमतीं) मधुर-मीठी (शन्तिवाम्) शान्ति सुख प्रदान करने वाली (वाचं) वाणी (वदतु) बोले।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।

सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।। (अथर्व. 3.30.3)

(भ्राता) एक भाई (भ्रातारं) दूसरे भाई से (मा द्विक्षत्) द्वेष न करे। (उत) और (स्वसा) एक बहन (स्वसारम्) दूसरी बहन से (द्वेष न करें) यहाँ पर वेद पारिवारिक सुख-शान्ति और समृद्धि के लिए एक सद्व्यवहार की प्रेरणा दे रहा है। यह सर्वथा सार्थक है। पुत्र के लिए आवश्यक है कि वह अपने पिता के विचारों को जान कर तदनुसार कार्य करें, वह आज्ञाकारी होवे। माता ममता स्नेह की मूर्ति होती है, उसकी गोद को पहली पाठशाला कहा गया है। सभी सन्तानों के प्रति उसका स्नेह वात्सल्य होना चाहिए। वेद में पत्नी को ही घर कहा है।

जायेदस्तम् (जाया) पत्नी (इत्) ही (अस्तम्) घर है। अर्थात् घर की समृद्धि में जाया का विशेष उत्तरदायित्व है। गृहस्वामी पति की वह अपनी प्रिय मधुर वाणी से थकावट दूर करें। इसी प्रकार भाई-बहन सभी आपस में मिल-जुल कर रहें और अपने निर्धारित कर्त्तव्यों का पालन करते हुए परिवार को सुखी बनाएँ। इस प्रकार सामाजिक एकता समरसता सह अस्तित्व का वेद मार्गदर्शक है।

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः । (अथर्ववेद 3.30.6)

(हे मनुष्यों) (वः) आप सभी की (प्रपा) पानीयशाला (समानी) समान एक हो (अन्नभागः) अन्न का भाग वितरण समान हो।

केवलाघो भवति केवलादी । (ऋग्वेद 10.117.6)

(केवल-आदी) केवल अकेला खाने वाला (केवल अघः भवति) केवल पाप को भोगने वाला होता है।

पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः। (पुमान्) एक मनुष्य (पुमांसं) अन्य मनुष्य की (विश्वतः) सभी तरह से (परिपातु) रक्षा करे। इस प्रकार वेद सभी मनुष्यों के सह अस्तित्व, सहचारित्र पर बल देता है। सभी सुखी-समृद्ध रहें। ऋग्वेद के अन्तिम मन्त्र में यही कामना की गई है।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।। (ऋग्वेद 10.191.4)

हे मनुष्यों (वः) आप सभी के (आकूतिः) विचार संकल्प (समानी) समान हों। (वः) आप सभी के (हृदयानि) हृदय (समाना) समान हों (वः) आप सभी के (मनः) मनन-चिन्तन (समानम् अस्तु) समान हों। (यथा) जिससे (वः) आप सभी का सह अस्तित्व के लिए चिन्तन-मनन, भावना, समानता एवं एकरूपता परमावश्यक है।

वेदों में राष्ट्रीय प्रेम की चेतना- देशप्रेम राष्ट्रीयता की उदात्त शिक्षा वेद प्रदान करते हैं। मनुष्यों में राष्ट्रीय चेतना जागरित करने वाले अनेक मन्त्र हैं- **माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः** । (अथर्ववेद 12.1.12) (भूमिः) भूमि हमारी माता है। (अहं) मैं (पृथिव्याः) पृथिवी का पुत्र हूँ। **नो मात्रे पृथिव्यै। (यजुर्वेद 9.22)** (मात्रे पृथिव्यै) माता पृथिवी को (नमः) नमस्कार है। वेदों के इन वचनों से मातृभूमि के प्रति आत्मीय भावना होती है और इस पर रहने वाले हम सभी बहन-भाई हैं। अतः हम सभी को परस्पर मेल-मिलाप से रहना चाहिए। परस्पर एक दूसरे के हित का ध्यान रखना चाहिए।

विश्वबन्धुत्व की भावना- विश्वमानुष, बन्धुत्व, भाईचारा का उदात्त पाठ हमें वेद पढ़ाता है।यत्र विश्वं भवत्येकनीडम् (यत्र) जहाँ पर (विश्वं) सम्पूर्ण संसार (एकनीडम्) एक घोसला (भवति) हो जाता है। ईशावास्यमिदं सर्वम् (इदं सर्वम्) यह सब कुछ (ईशावास्यम्) ईश्वर परमात्मा से परिव्याप्त है। पुरुष एवेदं सर्वम् (इदं सर्वम्) यह सब कुछ (पुरुषःएव) परमपुरुष परमात्मा ही है।

सर्वं खल्विदं ब्रह्म (इदं सर्वम्) यह सम्पूर्ण जगत् (खलु) निश्चित रूप से ब्रह्म ही है इत्यादि रूप से सम्पूर्ण विश्व एक परिवार है। **वसुधैव कुटुम्बकम्** जैसी उदात्त भावना जागरित करने में वेदों का ही योगदान है और इसी का फल है सर्वकल्याण समष्टि का हित सर्वे भवन्तु सुखिनः - सभी सुखी हों। संकुचित क्षुद्र स्वार्थ भावना से ऊपर उठकर सर्वहित प्रेरणा वेदों से मिलती है। वेद सर्वहित सम्पादक महौषधि हैं। इस तरह वेद समस्त मानवता को एक सूत्र में सग्रंथित करते हैं और सकल विश्व के लिए वेदों का यह अनुपम योगदान है।

वेदों में पर्यावरण चेतना- हमारे वैदिक ऋषि मनीषी पर्यावरण रक्षण के प्रति बहुत ही जागरूक और सावधान रहे हैं। पर्यावरण रक्षण का अभिप्राय ही है स्वयं की रक्षा। अतः स्वकीय रक्षाहेतु यह पर्यावरण रक्षणीय है, इसी दृष्टि से उन्होंने प्रकृति की दैवतभाव से उपासना की। सहज रूप से कल्याणकारिणी वरदायिनी यह प्रकृति पूजा के योग्य है, इसको नियन्त्रित, वश में नहीं करना है, इसके सन्तुलन को बाधित नहीं करना है। उपासना से यह इच्छित फल प्रदान करने वाली है। एक ही परम तत्त्व सर्वत्र ओतप्रोत है - **सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च** (जगतः) जंगम-गमनशील चेतन (च) और (तस्थुषः) स्थावर अचेतन की (आत्मा सूर्यः) आत्मा सूर्य है अर्थात् सूर्यरूपी परमात्मा सभी चेतन और अचेतन पदार्थों में परिव्याप्त है, उससे बाहर कुछ भी नहीं है। सब कुछ परमात्मस्वरूप होने से केवल मनुष्यों की नहीं, अपितु पशु-पक्षियों, लता-वनस्पतियों सभी की रक्षा हो जाती है और एक सुखमय आह्लादमय रहने योग्य

संसार बन जाता है। ऋषियों ने इसी दृष्टि से नदी, अश्मा, वनस्पतियों की भी दैवतभाव से प्रार्थना की है। भौतिक प्राकृतिक पर्यावरण रक्षण के साथ ही ऋषियों ने आन्तरिक पर्यावरण स्वच्छता पर, उदात्त जीवन मूल्यों के रक्षण पर बल दिया है और इस तरह वर्तमान में पर्यावरण प्रदूषण की विश्व व्यापी गम्भीर विषम समस्या का समाधान वेदों से प्राप्त हो जाता है -

अग्निमीळे पुरोहितम्' (ऋग्वेद 1.1.1)

(पुरोहितम् अग्निम्) पुरोहित अग्नि की (ईळे) में प्रार्थना करता हूँ। वैदिक ऋषि की दृष्टि में यह अग्नि केवल पाचक दाहक प्रकाशक ही नहीं, अपितु यह सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी अग्रगामी नेतृत्व करने वाला सर्वाधिक रमणीय धनों को देने वाला है। अतः जातवेदस् वैश्वानर पुरोहित देव इत्यादि रूप में यह अग्नि प्रार्थनीय है।

1.5 वेदपरम्परा वेद शाखाओं का परिचय- वास्तव में सम्पूर्ण ज्ञानराशि को ही वेद कहते हैं। यह ज्ञाननिधि अतीव समृद्ध तथा विशाल है। इसलिए अध्ययन की सुविधा तथा कई अन्य दृष्टियों से इसका वर्गीकरण किया गया। भगवान् वेदव्यास ने इस एक ज्ञाननिधि का चार भागों में विभाजन करके अपने चार शिष्यों को पढ़ाया -

1. ऋग्वेद – पैल
2. यजुर्वेद - वैशम्पायन
4. अथर्ववेद = सुमन्तु
3. सामवेद - जैमिनि

इस तरह ज्ञानसमूह एक ही वेद अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से चर्चा विभक्त हो गया और इसी विभाजन के कारण वेदव्यास - वेदों को विभक्त किया) वादरायण का नाम वेदव्यास पड़ गया। पुनः इनके पैलादि शिष्यों ने परम्परा को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए वेदव्यास ने शिष्यों को उन-उन ऋग्वेदादि को पढ़ाया और इस प्रकार गुरु-शिष्य-परम्परा से एक ही वेद = ज्ञाननिधि असंख्य शाखा प्रशाखाओं में विभक्त हो गया। यज्ञ की दृष्टि से भी वेदों का विभाजन किया गया है। यज्ञ में मुख्यतः 4 पुरोहित या ऋत्विक होते हैं -

1. होता, 2. अध्वर्यु, 3. उद्गाता 4. ब्रह्मा

होता नामक ऋत्विक् यज्ञ में हव्यग्रहण करने के लिए इन्द्र-विष्णु-वरुणादि देवताओं को आवाहन करते हैं है। एतदर्थ मन्त्र ऋग्वेद में हैं। उद्गाता नामक ऋत्विक मधुर गीति द्वारा देवों की प्रशंसा करता है। गेयमन्त्र सामवेद में हैं। अध्वर्युनामक ऋत्विक् यज्ञ सम्बन्धी विविध क्रियाकलापों को करता है यथा यज्ञवेदी का निर्माण, हवनसामग्री संकलनादि। इन कार्यों अनुष्ठानों का निरूपण यजुर्वेद में किया गया है, चतुर्थ ऋत्विक् ब्रह्मा यज्ञ का अधिष्ठाता होता है, अपने निरीक्षण एवं निर्देशन में वह यज्ञ को सम्पन्न कराता है। यह ऋक्-यजुस्-साम सभी वेदों का ज्ञाता होता है, यद्यपि इसका अपना कोई स्वतन्त्र वेद नहीं है। इन्हीं ऋक् यजुस् साम के मन्त्रों का विनियोग यज्ञ में होता है और वेदत्रयी रूप में इन्हीं की प्रसिद्धि है। उत्तरकाल में अथर्ववेद को यज्ञ को प्रधान ऋत्विक् ब्रह्मा के साथ जोड़ दिया गया इसीलिए अथर्ववेद ब्रह्मवेद के नाम से प्रसिद्ध है। आचार्य आपस्तम्ब ने मन्त्र तथा ब्राह्मण दोनों भागों के सम्मिलित रूप को वेद संज्ञा से सम्बोधित किया है (मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्) । इस दृष्टि से वेद के दो प्रमुख भाग हैं -

(1) मन्त्र भाग (2) ब्राह्मण भाग

इनमें भी में मन्त्र भाग मूल है और इसी की व्याख्या ब्राह्मण भाग अपने मूल मन्त्र भाग की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। यह व्याख्या भी तीन दृष्टियों से की गई है -

1. यज्ञ-कर्मकाण्डपरक, 2. उपासनापरक, 3. ज्ञानपरक

और इस प्रकार ब्राह्मण भाग के तीन उपविभाग हैं - 1. ब्राह्मण 2. आरण्यक 3. उपनिषद्

मन्त्र भाग को संहिता कहते हैं और ये पाँच संहिताएँ हैं -

1. ऋक् संहिता, 2. शुक्लयजुर्वेद, 3. कृष्णयजुर्वेद, 4. सामवेद तथा 5. अथर्ववेद

वस्तुतः मन्त्र भाग की ही व्याख्या ब्राह्मण भाग हैं, इसमें मन्त्र भाग में संहिताएँ हैं उतने ही व्याख्यानात्मक ब्राह्मण भाग भी हैं। इस प्रकार प्रत्येक संहिता के अपने-अपने ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद् भी हैं और इनमें भी गुरु-शिष्य परम्परा से अनेक शाखा-प्रशाखाएँ हो गई हैं। अपने व्याकरण महाभाष्य में भगवान् पतञ्जलि ने ऋग्वेद की 21 यजुर्वेद की 101, सामवेद की 1000 तथा अथर्ववेद की 9 शाखाओं का उल्लेख किया है परन् इनके द्वारा उल्लिखित सभी 1131 शाखाएँ आज उपलब्ध नहीं हैं।

वर्तमान में उपलब्ध प्रमुख शाखाएँ निम्नलिखित हैं।

मन्त्र संहिता	ब्राह्मण	आरण्यक	उपनिषद्
ऋग्वेद	ऐतरेय ब्राह्मण कौषितकी ब्राह्मण (शांखायन)	1.ऐतरेयोपनिषद् 2. शांखायन आरण्यक	ऐतरेयोपनिषद् कौषितकि-उपनिषद्
शुक्लयजुर्वेद	शतपथ ब्राह्मण	बृहदारण्यक	बृहदारण्यकोपनिषद् ईशावास्योपनिषद्
कृष्णयजुर्वेद	तैत्तिरीयोपनिषद्	तैत्तिरीयारण्यक	तैत्तिरीयोपनिषद् महानारायणोपनिषद् मैत्रायणीयोपनिषद् कठोपनिषद् श्वेताश्वतरोपनिषद्
सामवेद	पञ्चविंश (ताण्ड्य) महाब्राह्मण षड्विंश ब्राह्मण सामविधान ब्राह्मण आर्षेय ब्राह्मण		छान्दोग्योपनिषद्
अथर्ववेद	गोपथ ब्राह्मण		मुण्डकोपनिषद् माण्डूक्योपनिषद्

संस्कार कनिष्ठ सहायक अवबोध हेतु उपर्युक्त वेद परिचय इकाई का अध्ययन करेंगे वेदों के विशेष ज्ञान के लिए संस्कार सहायक के पाठ्यक्रम का एवं अन्य वेद सम्बन्धित पुस्तकों का अध्ययन कर सकते हैं।

इकाई-2 गृह्यसूत्रपरिचय

गृह्यसूत्रपरिचय- कल्प वेदांग है, इसे वेदपुरुष की भुजा कहा जाता है। अतः कल्पशास्त्र के विषय में आचार्य कहते हैं "कल्पो वेदविहितानां कर्मणामानुपूर्येण कल्पनाशास्त्रम्' अर्थात् जिनमें वेदविहित कर्मों का सुव्यवस्थित रूप से वर्णन हैं उसे कल्पशास्त्र कहते हैं। ये विशेष रूप से वैदिक ग्रन्थों के उचित अनुप्रयोग के लिए अभिप्रेत है। सबसे प्राचीन कल्पसूत्र और आरण्यक वे हैं जो अपनी साक्षात् ब्राह्मणों से जुड़े हैं और यह ब्राह्मणों की मुख्य सामग्री अनुष्ठान (कल्प) थी, जो कल्पसूत्र सूत्र शैली में नियमों का वर्णन है, उन सभी विषयों को छोड़कर जो नहीं हैं। यह समारोह से जुड़ा हुआ है। वे ब्राह्मणों से अधिक व्यावहारिक हैं। जो अधिकांशतः रहस्यमय, ऐतिहासिक, पौराणिक, व्युत्पत्ति संबंधी और धर्मशास्त्रीय चर्चाएँ। वे वैदिक शास्त्र के अध्ययन के लिए भी महत्वपूर्ण माने जाते हैं। अतः संस्कृति और समाज के लिए भारत में अन्तर्हृदयकी ग्रन्थियों को सुलझाने तथा भगवत्प्राप्ति के मार्ग का प्रदर्शन करने लिए व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक का जीवन वेदों के गृह्यसूत्रों का वर्ण वैदिक जीवन चर्या में उपलब्ध है। कल्पसूत्र के चार प्रकार हैं-

(1) श्रौतसूत्र, श्रौत यागों के विधानों से सम्बन्धित है।

(2) गृह्यसूत्र, जो गृह के अनुष्ठानों से सम्बन्धित हैं

(3) धर्मसूत्र, जो धार्मिक एवं सामाजिक विधानों से सम्बन्धित हैं

(4) शूल्बसूत्र, जो अग्नि-वेदी आदि के मापन के मानकों से सम्बन्धित हैं।

वेद एवम् उनके, गृह्यसूत्रों के विषय,गृह्यसूत्रकार,गृह्यसूत्रों के भाष्यकार,उपलब्ध गृह्यसूत्र.

दो प्रकार के कर्म हैं। श्रुति लक्षण, आचार लक्षण। वैतानिक अग्निहोत्रादि कर्म श्रुति लक्षण एवं गृहस्थाश्रम में साधित अग्निहोत्रादि (गृह्याग्नि) कर्म गृह्य लक्षण अर्थात् पाणिग्रहणादि संस्कार। यस्मिन्नग्नौ पाणि गृह्णीयात् स गृह्यः।।(खा. गृ.सू.(1.5.9) अर्थात् जातकर्मादि गृह्यकर्मों एवं संस्कारों का विधान गृह्यसूत्रों में वर्णित है।

गृहस्थ-जीवन में जो भी धार्मिक कार्य संस्कार आदि का विधान है उसके अनुष्ठान की विधि एवं कर्तव्याकर्तव्यत्व का निरूपण जिन कल्प-ग्रन्थों में सूत्र रूप में वर्णित है उन्हें 'गृह्यसूत्र' कहते हैं। इन्हीं गृह्यसूत्रों का परिवर्धित रूप कालान्तर में स्मृति ग्रन्थों के रूप में हमें प्राप्त होता है।

गृहस्थ-जीवन से संबंधित गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त जितने भी क्रियाकलाप है उन सबका विस्तार अनुष्ठानविधि गृह्यसूत्रों में वर्णित है। **यस्मिन्नगनौ पाणिं गृह्णीयात् सः गृह्यः**। (खादिरगृह्यसूत्र 1.1.1)

गृह्यसूत्रों में पुंसवन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, उपनयन, समावर्तन, आठ प्रकार के विवाह (ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गांधर्व, राक्षस, पैशाच) और अन्त्येष्टि इत्यादि सोलह संस्कारों की विधि-विधान वर्णित हैं। आश्वलायन गृह्यसूत्र, शांखायन गृह्यसूत्र, मानव गृह्यसूत्र, बौधायन गृह्यसूत्र, आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र, भारद्वाज गृह्यसूत्र, पारस्कर गृह्यसूत्र, द्राह्यायण गृह्यसूत्र, गोभिल गृह्यसूत्र, खदिर गृह्यसूत्र, कौशिक गृह्यसूत्र आदि मुख्य गृह्यसूत्र हैं। ऐसे व्यक्ति जो वेद-पुराणों के पाठक, आस्तिक, पंचदेवों (गणेश, विष्णु, शिव, सूर्य व दुर्गा) के उपासक और गृहस्थ धर्म का पालन करने वाले होते हैं, उन्हें स्मार्त्त कहते हैं। स्मार्त, श्रुति और स्मृति में विश्वास रखता है। 'स्मार्त बटुक-विद्वान स्मृति-ग्रन्थों का विशेष अध्ययन करते हैं।

2.1 ऋग्वेदीय गृह्यसूत्र ऋग्वेदीय गृह्यसूत्र एवं उनके विषय -

आश्वालायन गृह्यसूत्र एवं 'शांखायन गृह्यसूत्र, 'शौनक गृह्यसूत्र ये ऋग्वेदीय गृह्यसूत्र हैं।

उपलब्ध गृह्यसूत्र-

वेद	गृह्यसूत्र
ऋग्वेद	आश्वलायन, शांखायन, शौनक

3.1. **आश्वालायन गृह्यसूत्र के प्रथम अध्याय के विषयों का परिचय-** - आश्वालायन ऐतरेय ब्राह्मण से सम्बन्धित है, इसमें चार अध्याय हैं, जिसके पहले अध्याय में विवाह, गर्भाधानादि ग्यारह संस्कारों का वर्णन है।

प्रथम खण्ड के विषयों का परिचय- गृह्य कर्म व्याख्या प्रतिज्ञा।

चतुर्थ खण्ड- चौलादिकर्म कालविधान, विवाह का सार्वकालिकत्व, आज्यहोम, होमविधान, अष्ट आहुतियों का समुच्चय विधान, प्रथम कुलपरीक्षा, वरगुण, कन्यागुण, लक्षण दुज्ञेयत्व, ब्राह्मविवाह, देवविवाह, प्राजापत्यविवाह, प्राजापत्योढा में जातक का आर्षविवाह, सप्तदशपुरुषोत्तारकत्व, गान्धर्वविवाह, आसुरविवाह, पैशाचविवाह, राक्षसविवाह।

पञ्चम खण्ड- कुल परीक्षा, वरगुण विमर्श, लक्षणों का दुर्विज्ञेयत्व, कन्यागुण, मृत्तिका गोल परीक्षा, पिण्डग्रहण में भाविशुभाशुभ फल।

षष्ठ खण्ड- ब्राह्मादि विवाह।

सप्तम खण्ड- विवाह में देशधर्मादि कर्तव्य, पाणिग्रहण विधान।

नवम खण्ड

पाणिग्रहण से गृह्माभिपरिचर्या।

त्रयोदश खण्ड

गर्भलम्भन,पुंसवनस्वरूप प्रश्नादि, दक्षिणनासायां दूर्वा, हृदयस्पर्श।

चतुर्दश खण्ड

सीमन्तोन्नयन, सीमन्तव्यूहन।

पञ्चदश खण्ड

जातकर्म स्वरूप, मेधाजननमन्त्र, नामकरणम्, नामाक्षरादिकथन, चार अक्षरों के नाम कार्य, नामविषय कामना, द्वयक्षर नाम पुंस, विषमाक्षर स्त्रियों के नाम, अभिवादन, मस्तकावहरणमन्त्र, तूष्णीं कुमार्या।

षोडश खण्ड

अन्नप्राशन मास, ब्रह्मवर्चस, तेजस्कामत्वे घृतौदन, प्राशनमन्त्र।

सप्तदश खण्ड

चौलकाल, क्षुरस्थापन, केशच्छेदनमन्त्र, केशस्थापनप्रकार, क्षुरधारानिमार्जन।

एकोनविंशतिः खण्ड

उपनयनकाल गर्भाष्टमे वा वर्षे, क्षत्रिय का काल एकादश वर्ष, वैश्य का द्वादश, ब्राह्मण का षोडश वर्ष, क्षत्त्रिय-वैश्यों के लिए कालकथन।

द्वितीय अध्याय के विषय- श्रावणी, आश्वयुजी, आग्रहायणी, अष्टका, गृहनिर्माण और गृहप्रवेश का वर्णन है।

शांखायन गृह्यसूत्र-

प्रथम अध्याय के विषय- गर्भाधानादि सस्कारों और पार्वण का वर्णन है।

द्वितीय अध्याय के विषय- उपनयन एवं ब्रह्मचर्य आश्रम का विवरण है।

शांशायन गृह्यसूत्र- रचनाकार युयज्ञ है, इसमें छः अध्याय है- संस्कार- गृहनिर्माणादि का वर्णन है तथा यह गृह्यसूत्र आदि का वर्णन है, इसके प्रमुख भाष्य-ग्रन्थों में सुमंत सूत्रभाष्य जैमिनीय-सूत्रभाष्य 'वैशम्पायन-सूत्रभाष्य' और पैल-सूत्रभाष्य उल्लेखनीय है। शांखायन गृह्यसूत्र के एक अन्य भाष्यकार रामचन्द्र हैं। इनके अतिरिक्त शांखायन' पर लिखी गई टीकाओं में दयाशंकर द्वारा गृह्यसूत्र प्रयोगदीप, रघुनाथ कृत 'अर्थदर्पण', रामचन्द्रकृत गृह्यसूत्रपद्धति', वासुदेवकृत 'गृह्यसंग्रह' और नारायणकृत नारायणी प्रमुख हैं तथा इसमें चार अध्याय हैं।

कौषीतकि गृह्यसूत्र- इसके रचयिता शाम्भव्य है और पाँच अध्याय हैं। विवाह, प्राम्भिक संस्कार, उपनयन संस्कार, पितृमेध और कृषिकर्मों का उल्लेख है।

अप्रकाशित गृह्यसूत्र- शौनक, भारवीय, पाराशर, शाकल्य, पैङ्गिररस गृह्यसूत्र आदि।

2.2 यजुर्वेदीय गृह्यसूत्र एवं उनके विषय-

यजुर्वेद के दोनों ही शाखाओं में गृह्यसूत्र उपलब्ध हैं। **शुक्ल यजुर्वेदीय गृह्यसूत्र**- पारस्कर गृह्यसूत्र, **कृष्ण यजुर्वेदी गृह्यसूत्र**- बौधायन गृह्यसूत्र, भारद्वाज गृह्यसूत्र, आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र, वैखानस गृह्यसूत्र, वाधूल गृह्यसूत्र, मानव गृह्यसूत्र, काठक गृह्यसूत्र तथा वाराह गृह्यसूत्र हैं। बौधायन ऋषि द्वारा प्रणीत बौधायनगृह्यसूत्र तीन अध्यायों में विभक्त है। इस पर गोविन्द स्वामी की टीका है। मूल रूप से यह बौधायन के ही कल्पसूत्र के अन्यतम भाग के रूप में उपलब्ध है।

उपलब्ध गृह्यसूत्र-

वेद	गृह्यसूत्र
शुक्लयजुर्वेद	पारस्कर
कृष्णयजुर्वेद	आपस्तम्ब, बौधायन सत्याषाढ, वैखानस भारद्वाज, वाधूल, काठक ,वाराह , हिरण्यकेशी, मानव, अग्निवेश्य

भारद्वाज कल्पसूत्र तैत्तिरीय शाखा से सम्बद्ध है। इसमें तीन अध्याय है। 'भारद्वाज' गृह्यसूत्र पर कपर्दिस्वामी तथा रंगभट्ट के भाष्य उपलब्ध हैं।

आपस्तम्ब ऋषि द्वारा प्रणीत आपस्तम्ब धर्मसूत्र मूलतः कल्पसूत्र का ही भाग है। यह आपस्तम्ब कल्पसूत्र के 26वें और सत्ताईसवें प्रश्न के रूप में वर्णित है। 'आपस्तम्ब गृह्यसूत्र पर कर्काचार्य,

सुदर्शनाचार्य, नृसिंह, हरिदत्त, कृष्णभट्ट सहदेव और धूर्तस्वामी के भाष्य उपलब्ध हैं। हिरण्यकेशी गह्यसूत्र भी प्रायः अन्य यजुर्वेदीय गृह्यसूत्रों के समान मूलतः कल्पसूत्र का ही भाग है। यह हिरण्यकेशी कल्पसूत्र 19 वें 20वें अध्याय के रूप में वर्णित है। इसका दूसरा नाम सत्याषाढ गृह्यसूत्र है। इस पर मातृदत्त का भाष्य उपलब्ध है।

भारद्वाज गृह्यसूत्र- इसमें तीन प्रश्न है तथा विवाह के विषय में वर्णन है।

वैखानस गृह्यसूत्र- तैत्तिरीय शाखा से सम्बद्ध है। यह परवर्तीयुग की रचना है क्योंकि उसमें ऐसे विषयों का समावेश है जो परिशिष्ट के अन्तर्गत और मंत्र केवल प्रतीकात्मक है, इसमें अठारहह संस्कारों का उल्लेख है।

अग्निवेश्य गृह्यसूत्र-अग्निवेश द्वारा विरचित वाधूल गृह्यसूत्र कृष्णयजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा से सम्बद्ध है। यह अग्निवेश्य गृह्यसूत्र नाम से भी प्रसिद्ध है। इसमें वर्णित विषय अन्य गृह्यसूत्रों से भिन्न हैं।

मानव गृह्यसूत्र- लौगाक्षि के द्वारा रचित मानव गृह्यसूत्र है, इसको 'लौगाक्षि गृह्यसूत्र भी कहते हैं। मानव गृह्यसूत्र मैत्रायणी संहिता से सम्बद्ध है। यह दो प्रकरण से युक्त है। इस पर अष्टावक्र का भाष्य उपलब्ध है।

काठकगृह्यसूत्र- इसको लौगाक्षिगृह्यसूत्र तथा पञ्चाध्यायी भी कहा जाता है।

वाराह गृह्यसूत्र- यह मैत्रायणी शाखा के मंत्रों से सम्बन्धित है, इसमें तेरह संस्कारों का वर्णन प्राप्त होता है। यह परवर्तीकाल की रचना है। इसके अंश मानवगृह्यसूत्र तथा काठक गृह्यसूत्र के समान ही है।

शुक्ल यजुर्वेदीय गृह्यसूत्र- पारस्कर गृह्यसूत्र शुक्ल यजुर्वेदीय है। यह वाजसनेय गृह्यसूत्र नाम से भी ख्यात है जो तीन काण्डों में विभक्त है, इसमें **तेरह संस्कारों** का उल्लेख है। भाष्यकार कर्काचार्य है।

प्रथम काण्ड

चतुर्थीकर्म (गर्भाधान), पक्षादिकर्म (दर्शपूर्णमासस्थालीपाक), गर्भधारणायनस्तविधि, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, सीमन्तीक (सुखप्रसवार्थ कर्म), जातकर्म, नामकरण, बहिर्निष्क्रमण, सूर्यावलोकन, प्रोष्यागतस्य कर्म, पुत्रादिदर्शन विधि, अन्नप्राशन।

द्वितीयकाण्ड

चूडाकरणकेशान्त, उपनयन, , ब्रह्मचारिव्रत, स्नातकभेद, समावर्तन, उपनयन की परमावधि।

तृतीय काण्ड

विषय वस्तु- प्रथम काण्ड में आवसथ्य अग्न्याधान, विवाह तथा गर्भाधान से अन्नप्राशन पर्यन्त संस्कार वर्णित हैं।

के गृह्यसूत्र पर कर्काचार्य, जयराम, हरिहर आदि की व्याख्याएँ हैं। शुक्ल यजुर्वेद में कातीय गृह्यसूत्र का भी उल्लेख हैं। 'कातीय गृह्यसूत्र के रचनाकार पारस्कराचार्य, वृत्तिकार वासुदेव और टीकाकार जयराम हैं। इसी गृह्यसूत्र पर एक पाण्डित्यपूर्ण टीका शंकर गणपति रामकृष्ण की है। इस ग्रन्थ पर कर्क, गदाधर, जयराम, मुरारि मिश्र, रेणुकाचार्य, वागीश्वरदत्त और वेदमिश्र के भाष्य प्रसिद्ध हैं।

2.3 सामवेदीय गृह्यसूत्र एवं उनके विषय

सामवेदीय गृह्य सूत्र- गोभिल गृह्यसूत्र, खादिर गृह्यसूत्र और जैमिनीय, कौथुम गृह्य सूत्र आदि सामवेदीय गृह्यसूत्र उपलब्ध हैं।

उपलब्ध गृह्यसूत्र-

वेद	गृह्यसूत्र
सामवेद	गोभिल, खादिर, गौतम, जैमिनीयकौथुम ,

गोभिल गृह्यसूत्र- सामवेद की कौथुमशाखा से सम्बन्धित है और चार प्रपाठकों में विभाजित है। इस पर कात्यायन ने 'कर्मप्रदीप' नाम से एक परिशिष्ट लिखा है। कात्यायन की एक टीका 'आदित्य' है जो कि शिवराम से मिलती है। गोभिल गृह्यसूत्र के प्रमुख टीकाकार भद्रनारायण, सायण, और शिवि हैं तथा गोभिल गृह्यसूत्र में चार प्रपाठक हैं।

खादिरगृह्यसूत्र- राणायनीय शाखा से सम्बद्ध है। इस पर स्कन्दस्वामी की पाण्डित्यपूर्ण वृत्ति है। वामन ने इस पर कारिकाएँ लिखी हैं। यह गोभिल गृह्य सूत्र का ही संक्षिप्तीकरण है।

'पितृमेध गृह्यसूत्र को गौतम कृत बताया जाता है। इस ग्रन्थ के टीकाकार अनंतज्ञान का कहना है कि ये गौतम न्यायसूत्रों के प्रणेता अक्षपाद महर्षि गौतम ही थे। इसमें दो खण्ड है। प्रथमखण्ड में चौबीस कण्डिकाएँ है और द्वितीय खण्ड में नौ कण्डिकाएँ हैं। इस पर सुबोधिनी टीका मिलती है।

गोभिल गृह्यसूत्र-

द्वितीय कण्डिका

यज्ञोपवीत, यज्ञोपवीतस्वरूप।

द्वितीय प्रपाठक के विषय-

प्रथम कण्डिका

पुण्यनक्षत्रविवाह कर्तव्यता।

ज्ञातिकर्म, कन्यास्नान, वासपरिधापन, पाणिग्रहणप्रकरण, कर्तव्यताविशेष द्रव्याद्या।

द्वितीय कण्डिका

लाजहोम, अश्माक्रमण, कन्यापरिणय, सप्तपदी, ईक्षकप्रतिमन्त्र, वर-वधु मूर्धा अभिषेक, कन्यापाणिग्रहण।

चतुर्थ कण्डिका

वध्वायानारोहण, नव वधु गृहागमन।

पञ्चम कण्डिका

चतुर्थी होम, प्रायश्चिताज्याहुति होम, उदपात्र सम्पात प्रक्षेप, वधु उद्वर्तन, ऋतुगमनविचार, गर्भाधान।

षष्ट कण्डिका

पुंसवनकाल निरूपण व कर्तव्य, अपरपुंसवन।

सप्तम कण्डिका

सीमन्तकरणकाल निर्णय व कर्तव्यता, सोष्यन्तीहोम, जातकर्म, व्रीहियवप्रेषण, कुमारमेधाजनन, सर्पिः प्राशन, छन्दोगानाप्राशनविचार, अन्नप्राशनविधि, जातकर्म।

अष्टम कण्डिका

चन्द्रोपस्थापन, निष्क्रमण, चन्द्रायार्घ्यदान, नामकरण, कन्या नाम विशेष, कुमारजन्मतिथियजन।

नवम कण्डिका

चूडाकरण, द्रव्यसाधन, कर्मक्रम, कन्या विशेष, मुण्डन, चूडाकर्म समाप्ति।

दशमकण्डिका

उपनयन प्रकरण, काल, व्रात्यकारण, उपनयन में प्रातः भोजन, माणवक स्योपवीत धारण, अलाभे उपदेश, उपनयन में अग्नि स्थापन, मन्त्रविचार आदि।

2.4 अथर्ववेदीय गृह्यसूत्र एवं उनके विषय

अथर्ववेद- ऋगादि अन्य वेद केवल आमुष्मिक फल देने वाले हैं, लेकिन अथर्ववेद ऐहिक और आमुष्मिक दोनों ही दृष्टियों से उपयोगी है जैसा कि सायणाचार्य का कथन है व्याख्याय वेदत्रित यमामुष्मिकफलप्रदम्। ऐहिकामुश्मिक फलं चतुर्थ व्याचिकीर्षति। (अथर्ववेद भाष्य भूमिका) ब्रह्म यज्ञ का सर्वप्रमुख ऋत्विक् है। गोपथ ब्राह्मण के अनुसार तीनों वेदों के द्वारा यज्ञ के मात्र एक पक्ष की ही पूर्ति होती है, ब्रह्म मन के द्वारा उसे पूर्णता प्रदान करता है।

अथर्ववेदीय गृह्यसूत्र- अथर्ववेदीय कौशिक गृह्यसूत्र में चौदह अध्याय हैं, इस पर केशव तथा हारिल की व्याख्याएँ मिलती हैं।

उपलब्ध गृह्यसूत्र-

वेद	गृह्यसूत्र
अथर्ववेद	कौशिक

यह शौनक शाखा से सम्बद्ध है। इसमें 14 अध्याय है।

अथर्ववेदीय गृह्यसूत्र परिचय -

सप्तम अध्याय के विषयों का परिचय-

नामकरण संस्कार, निष्क्रमण, काम्य कर्मों का वर्णन, ब्रह्मौदन अग्नि, सेनाग्नि, ऋत्विक एवं गौ के विषय में वर्णन।

दशम अध्याय के विषयों का परिचय-

विवाह संस्कार

एकादश अध्याय के विषयों का परिचय-

अन्त्येष्टि कर्म ।

संस्कारों के इस वर्णन से यह प्रमाणित हो जाता है कि राजा से सामान्य नागरिक तक सबकी परम्परागत इन संस्कारों में श्रद्धा होती थी। यही कारण है कि भारत में समय-समयपर होनेवाले आक्रमणकारियों के बर्बरतापूर्ण आक्रमण निष्फल रहे। ये हमारे पूर्वजों की अमर योजनाएँ, जिन्होंने देश को अखण्डित तथा हमें स्वाधीन बनाये रखा और जिनके द्वारा संस्कृत होने के कारण हम सब को एकता के सूत्र से जोड़ते हैं।

यह दक्षिण भारत में कृष्ण यजुर्वेदियों के लिए प्रसिद्ध है। आश्वलायन गृह्यसूत्र में वर्णित संस्कार ऋग्वेदीय शाखा वालों के लिए है। उत्तरभारत में शुक्लयजुर्वेद के महर्षि कात्यायन के द्वारा पारस्करगृह्यसूत्र की परम्परा दोनों शाखाओं में प्रचलित है। इसके निम्नलिखित भाष्यकार हैं- अमृतव्याख्या नन्दपण्डित, अर्थभास्कर भास्कर, प्रकाश, वेदमिश्र, संस्कारगणपति रामकृष्ण, सज्जनवल्लभ जयराम, कर्कभाष्य कर्काचार्य, गदाधरभाष्य गदाधर आदि भाष्य प्राप्त होते है।

शुक्लयजुर्वेद की दोनों शाखाओं में काण्व और माध्यन्दिन का प्रचलन है। यह ग्रन्थ तीन काण्डों में विभक्त है। पुनः यह 51 कण्डिकाओं में प्राप्त होता हैं। इसमें तेरह संस्कारों का वर्णन उपलब्ध है। यथा-

1. विवाह, 2. गर्भाधान, 3. पुंसवन, 4. सीमन्तोन्नयन, 5. जातकर्म, 6. नामकरण, 7.निष्क्रमण, 8. अन्नप्राशन, 9. चूडाकर्म, 10. उपनयन, 11. केशान्त, 12. समावर्तन, 13. अन्त्येष्टि।

गृह्यसूत्रों में निर्दिष्ट संस्कार सूत्रशैली में निबद्ध हैं। इनके विशेष नियम धर्मसूत्रों में प्राप्त होते हैं।

कल्प सूत्र के चार प्रकार हैं- यथा-

(1) श्रौतसूत्र, श्रौत यागों से सम्बन्धित है।

(2) गृह्यसूत्र, जो गृह्य के अनुष्ठानों से सम्बन्धित हैं

(3) धर्मसूत्र, जो धार्मिक एवं सामाजिक कानूनों से सम्बन्धित हैं

(4) शूल्बसूत्र, जो अग्नि-वेदी आदि के मापन के नियमों से सम्बन्धित हैं।

गृह्यसूत्र प्रायः गृहस्थजीवन की चर्चा से सम्बद्ध है इनमें मानवीय आचारों, अधिकारों कर्तव्यों उत्तरदायित्वों का गृह्यसूत्रों में आश्रमों की व्यवस्था का व्यापकरूप से वर्णन मिलता है। ब्रह्मचर्य, विवाह और वानप्रस्थ-ये तीन आश्रम व्यापकरूप से समाज में प्रचलित रहे। 'तैत्तिरीयसंहिता' के एक मन्त्र में प्रकारान्तर से इनसे सम्बद्ध तीन ऋण कहे गये हैं-'**जायमानो ह वै ब्राह्मणस्त्रिभिऋणवान् जायते। ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्य एष वा अनृणो यः पुत्री यज्वा ब्रह्मचारिवासी**' (6, 3, 10, 13) अर्थात् 'जब ब्राह्मण पैदा होता है तो उस पर तीन ऋण होते ते हैं। ऋषि- ऋण के अपाकरण के लिए ब्रह्मचर्यव्रत (शिक्षा), देव- ऋण देने के लिए यज्ञ (समाज) तथा पितृ ऋणसे मुक्ति के लिए वह श्रेष्ठ परिवार में विवाह करता है।' 'शांखायनगृह्यसूत्र' के उपनयन संस्कार में तीन वर्णों की अवधि का उल्लेख है, जो इस प्रकार है- 'गर्भाष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयेत' (2.1), 'गर्भैकादशेषु क्षत्रियम्' (2.4)। 'गर्भद्वादशेषु वैश्यम्' (2.5), 'आ षोडशाद् वर्षाद् ब्राह्मणस्यानतीतकालः' (2.7), 'आ द्वाविंशात् क्षत्रियस्य' (2.7), 'आ

चतुर्विंशाद् वैश्यस्य' (2. 8)। 'गर्भाधान-संस्कारादि हमारे ऋषि मुनि आचार्यों का ही योगदान है। समाज में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण राष्ट्र में आचार से ही आदर होता था। वे आचरण के क्षेत्र में उदाहरणीय व अनुकरणीय व्यक्ति समझे जाते थे। ईसा से आठ सौ वर्ष पूर्व भगवान् यास्क ने अपने ग्रन्थ 'निरुक्त' में आचार्य का निर्वचन करते हुए लिखा था- 'आचार्यः कस्मात् ? आचिनोत्यर्थान्, आचिनोति बुद्धिमिति वा। (1.4) जो शिष्य को सदाचरण अथवा सूक्ष्म से सूक्ष्म विषयों का अवबोध कराते हैं उन्हें आचार्य कहते हैं।' गृह्यसूत्रों का तात्पर्य संस्कारों से है। इन्हीं संस्कारों के कारण आज हमारे भारत वर्ष की अनुपम संस्कारित संस्कृति है।

इकाई-3 वैदिक संस्कार परिचय

3.1 **संस्कार शब्दार्थ**- 'संस्कार' शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से 'घा प्रत्यय लगाने पर **सम्परिभ्यां करोतौ भूषणे** - पाणिनीय सूत्र से भूषण अर्थ में 'सुद' (स्) आगम करने पर सिद्ध होता है। इसका अर्थ है- 'संस्करण', 'परिष्करण तथा शुद्धिकरण है। सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने पर संस्कार शब्द निष्पन्न होता है।

जैमिनि सूत्रों में शबर के अनुसार **स भवति यस्मिञ्जाते पदार्थों भवति योग्यः कस्यचिदर्थस्य'** अर्थात् संस्कार वह है जिसके करने से कोई व्यक्ति किसी कार्य को करने के योग्य हो जाता है। जै.सू. 3.1.3 वहीं तन्त्रवार्तिक की बात करे तो 'योग्यतां चादधानाः क्रियाः संस्कारा इत्युच्यन्ते, अर्थात् संस्कार वे क्रियाएँ हैं जो योग्यता प्रदान करती है।' व.ध.सू 4.1,4 गौ.ध.सू 8.8. संस्कार मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक उन्नति के लिए जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त विभिन्न अवस्थाओं के विकास के लिए भारतीय ऋषि मुनियों ने अपने वेदोक्त तप के अनुभव से पूर्व योजना का निर्माण किया था ताकि मनुष्य आध्यात्मिक, भौतिक एवं नैतिक उन्नति का उपभोग कर अपने जीवन को पवित्र और सदैव स्वस्थ रख सकें। **वैदिकः कर्माभिः प्रेत्य चेह च**। म.स्मृ.(2.26)

गार्नेहोंमैजति कर्म चौल मौजीनिबन्धनैः ।

बैजिक गार्भिक चैनो द्विजानामपमृज्यते ।।(म.स्मृ. 2.27)

3.2 **संस्कारों का उद्देश्य** – हमारे भारतीय संस्कारों का मूल उद्देश्य मानव जाति का नैतिक विकास करना है क्योंकि मानव शिक्षा तो प्राप्त कर लेता है लेकिन अपने नैतिक कर्तव्यों को भूलता जा रहा है।

आचार्य गौतम ने चालीस संस्कारों का वर्णन करने के उपरान्त मनुष्य के आठ गुणों की महता का व्याख्यान देते हैं यथा- दया, क्षमा, अनुसूया, शौच, शम, उचित व्यवहार, निरीहता, निर्लोभता, इनका वर्णन करते हुए निर्देश देते है कि जिस व्यक्ति ने चालीस संस्कारों का अवबोध तो किया है, परन्तु आठ आत्मगुणों का जिसमें अभाव है उनमें लोगों का संस्कार अवबोध कर्म निरर्थक जब तक वह अपने नैतिक कर्तव्यों का पालन नहीं करता हैं। अतः संस्कार, शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक शुद्धि का श्रेष्ठ मार्ग व आचार हैं। इन संस्कारों से मानव की बाह्याभ्यन्तर शुद्धि होती है जिससे वह समाज का श्रेष्ठ आचारवान नागरिक बनता है। अन्य उद्देश्य मानव जाति की आत्मिक उन्नति करना है, जिससे उसका बाह्य परिष्कार

के साथ -साथ नैतिक आचाक का भी विकास हो सके। सविधि संस्कारों के अनुष्ठान से संस्कृत व्यक्ति में विलक्षण तथा अवर्णनीय गुणों का प्रादुर्भाव हो जाता है। जैसा कि वीर मित्रोदय में वर्णन है- यथा-

आत्मशरीरान्यतरनिष्ठो विहित क्रियाजन्योऽतिशय विशेषः संस्कारः । वी.मि. पृ. 191

कार्यः शरीरसंस्कारः पावनः प्रेत्यचेहच म. स्मृ. 2/26

3.3 **वैदिकसंस्कारों संस्कारों की प्राचीनता-** संस्कारों के मूल स्त्रोत हमारे भारतीय वेदों के गृह्यसूत्र हैं। यहाँ से यह प्रारम्भ होते हुए क्रमशः धर्मसूत्र, वेदांगादि में भी विस्तृत वर्णन प्राप्त होता हैं।

पूर्वाचार्यों के द्वारा संस्कार शब्द का प्रयोग अनेक सन्दर्भों में प्राप्त होता है। यथा- मीमांसाशास्त्र में यज्ञ के अंगभूत पुरोडाश की शुद्धि के लिए संस्कार शब्द का प्रयोग दोषामार्जन कर पवित्रता के लिए प्रयुक्त होता है।

'प्रोक्षणादिजन्यसंस्कारो यज्ञाङ्गपुरोडाशेष्विति द्रव्यधर्मः।(वाचसपत्यम्, भाग 5, पा.गृ.सू. पृ.14)

न्यायशास्त्र के आचार्य भावों को व्यक्त करने की आत्मव्यञ्जक शक्ति को ही संस्कार मानते हैं। उपर्युक्त साक्ष्यों से स्पष्ट होता है कि वैदिककाल से लेकर संस्कार शब्द शुद्धता का ही बोध कराता है। इस प्रकार गर्भाधान, पुसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णभेद उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास, अन्त्येष्टि आदि वेदोक्त योजना से संस्कार करने पर बालको के पैतृक अर्थात् आनुवंशिक रोग तथा आचरण सम्बन्धित संस्कार जन्य दोष दूर होकर वेदोक्त बालकों का सर्वाङ्गीण विकास होता हैं।

3.4 **दो प्रकार के संस्कार-** हारीत स्मृति के अनुसार दो प्रकार के संस्कार होते हैं 1. ब्राह्म 2. दैव। गर्भाधान आदि ब्राह्म संस्कार एवं सप्तपाकसंस्था आदि याग देव संस्कार हैं। **द्विविधो हि संस्कारों भवति ब्राह्मो दैवश्चेति।(सं.ग. पृसं .7)**

स्मृतियों में यज्ञों का समावेश दैव संस्कारों के अन्तर्गत माना जाता है क्योंकि ये परोक्षरूप से पवित्र करने वाले संस्कार हैं और इनका मुख्य प्रयोजन देवों की आराधना है परन्तु संस्कारों का उद्देश्य व्यक्तित्व और जीवन को संस्कृत करना है। जैसा वीरमित्रोदय में वर्णन है-

पञ्चविंशतिर्संस्कारै संस्कृता ये द्विजातयः।

ते पवित्राश्च योग्याश्च श्राद्धादिषु नियोजिताः।।(संस्कारगणपतिः पृ.सं.9)

आचार्य अंगिरा ने 25 संस्कारों का वर्णन किया है यथा-

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो बलिरेव च।

जातकृत्यं नामकर्म निष्क्रमोऽन्नाषनं परम्।।

चौलकर्मोपनयनं तद्व्रतानाञ्चतुष्टयम्।

स्नानोद्वाही चाग्रयणमष्टकाच्च यथा तथा।।

श्रावण्यामाष्वयुज्याञ्च मार्गषीर्ष्याञ्च पार्वणम्।

उत्सर्गश्चाप्युपाकर्म महायज्ञाश्च नित्यशः।।

संस्कारा नियता ह्येते ब्राह्मणस्य विशेषतः।।(संस्कारगणपतिः पृ.सं.7)

गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, स्मृति ग्रन्थों के आधार हमें संस्कारों की संख्या भिन्न- भिन्न प्राप्त होती है यथा, मनु के अनुसार 13, गौतम के अनुसार 40, बृहस्पति के अनुसार 25 आदि। वर्तमान समाज में वेदव्यास के द्वार निर्दिष्ट 16 संस्कार प्रसिद्ध हैं।

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च।

नामक्रिया निष्क्रमोऽन्नप्राशनं वपनक्रिया।।

कर्णवेधो व्रतादेषो वेदारम्भक्रियाविधिः।

केशान्तः स्नानमुद्वाहो विवाहोऽग्निपरिग्रहः ।।

त्रेताग्निसङ्ग्रहश्चैव संस्काराः षोडशस्मृताः ।(संस्कारगणपतिः पृ.सं.8)

इनके निर्णय के सन्दर्भ में महर्षि अंगिरा ने कहा है कि अपनी- अपनी शाखा के अनुसार अपने -अपने गृह्यसूत्र में वर्णित को संस्कारों को करना चाहिए जैसा कि बृहस्पति ने कहा है यथा-

स्वे स्वे गृहे यथा प्रोक्तास्तथा संस्कृतयोऽखिलाः ।

कर्तव्या भूतिकामेन नान्यथा भूतिमृच्छति।।

गर्भाधान संस्कार-गर्भाधान संस्कार का उद्देश्य शिशु के जन्मजन्मान्तरों के दोषों को परिमार्जित कर सुसंस्कारों से सम्पन्न कर शिशु का सर्वाङ्गीण विकास करना है।

विभावरीः षोडश भामिनीनां ऋतूद्भमाद्या ऋतुकालमाहुः।

नाद्याश्चतस्रोऽत्र निषेकयोग्याः पराश्च युग्माः सुतदाः प्रशस्ताः।। (.मु.मा.6.3)

पुंसवन संस्कार- माता के गर्भ की रक्षा हेतु साक्षात् ब्रह्मा ने निर्देश दिया है यथा-

मातुर्गर्भस्य रक्षायै चातुर्वर्ण्यवपीक्ष्यते ।

वक्ष्यमाणात्र रक्षा हि चतुर्मुखोदिताः ।। (मु.वि.7.2)

यह द्वितीय संस्कार है माता के गर्भाशय में जब भ्रूण गतिविधि करने लगे तब यह संस्कार दूसरे एवं तीसरे मास में करना चाहिए- **तृतीयस्य गर्भमासस्याऽऽदिसदेशे पुंसवनस्य कालः(गो.गृ. द्वि. प्र. ष.क.) द्वितीये वा तृतीये वा मासि पुंसवनं भवेत्।व्यक्ते गर्भे भवेत् सीमन्तेन सहाथवा।। (निर्णयसिन्धु, प्रयोग पारिजात)** वही इस संस्कार के उद्देश्य की बात करें तो इसका उद्देश्य गर्भ को वीर्ययुक्त कर अन्य कुचेष्टाओं से रक्षाकर दीर्घायु पुत्र की कामना हेतु किया जाता है यथा- **उपनिषदि गर्भलम्भनं पुंसवनमलोभनं च ।।** (आ. गृ. सू. 1, पृ.35)

शुक्लपक्ष में हस्त एवं श्रवण नक्षत्र से चन्द्रमा युक्त हो प्रशस्त है यथा-

आयूयमाणपक्षे यदा पुंसनक्षत्रेण चन्द्रमा युक्तः स्यात् (आ.गृ.सू.2, पृ.सं.37)

सीमन्तोन्नयन संस्कार- यह तृतीय संस्कार है। सीमन्तस्य उन्नयनम् उद्द्भावनम् इति सीमन्तोन्नयन्। शिर में पाँच सन्धियाँ होती हैं जिनको सीमन्त(माँग)कहते हैं, गर्भिणी के केशों को सजाने को ही सीमन्तोन्नयन कहते हैं। अर्थात् इसका मुख्य उद्देश्य गर्भिणी की अमंगलकारी अदृश्य प्रभावों से रक्षा कर मानसिक शक्तियों का विकास करना है। **प्रथमगर्भे चतुर्थेमासि षष्ठेऽष्टमे वा (गो.गृ.द्वि. प्र. स.क..2)**

चतुर्थे गर्भमासे सीमन्तोन्नयनम् (आ.गृ.सू.1)

बृहस्पति-

पूर्वपक्षः शुभः प्रोक्तः कृष्णश्चान्त्यत्रिकं विना।

चतुर्दशी चतुर्थी च शुक्लपक्षे शुभप्रदे।।

वशिष्ठ- **चतुर्थे सावने षष्ठे वाऽप्यथवाऽष्टमे।**

शास्त्रों में इस समय यात्रा नहीं करने का निर्देश है यथा-

चतुर्थे मासि षष्ठे वाऽप्यथवाऽष्टमे गर्भिणी यदा।

यात्रा नित्यं विवर्ज्या स्यादाषाढे तु विशेषतः।।

जातकर्म संस्कार- यह चौथा संस्कार है। शिशु के निरोग,आयुर्वर्धन, ग्रहदोषनिवारण और अरिष्टनिवृत्ति, के लिए जातकर्म संस्कार का बहुत महत्त्व है। जैसा कि देव गुरु बृहस्पति वचन है-

अथातस्संप्रवक्ष्यामि जातकाले क्रियां शुभाम् ।

जातस्यारिष्टनाशाय नीरोगत्वाय सर्वदा ।।

दीर्घायुष्याय चास्यैव सर्वसम्पद्विवृद्धये ।

जन्मन्यशुभयोगानां विनाशाय विशेषतः।। (मु.वि.9.1)

प्राग्जन्म संस्कार - गर्भाधान, पुंसवन और सीमन्तोन्नयन।

- ❖ बाल्यावस्था के संस्कार -जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकरण, कर्णवेध।
- ❖ शिक्षा सम्बन्धी संस्कार- विद्यारम्भ, उपनयन, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन ।
- ❖ विवाह संस्कार ।
- ❖ अन्त्येष्टि संस्कार।

आचार्यों ने इस प्रकार संस्कारों को विभाजित किया है।

इकाई-4 वैदिक दिनचर्या

4.1 **प्रातः जागरण-** प्रातः जागरण प्रातः ब्रह्म मुहूर्त्त में उठकर अपने हाथों का अवलोकन करते हुए अधोलिखित मन्त्र का उच्चारण करें।

कराग्रे वसते लक्ष्मीः करमध्ये सरस्वती ।

करमूले स्थितो ब्रह्मा प्रभाते करदर्शनम् ॥

भूमिस्पर्श- उपर्युक्त मन्त्र के स्मरण के पश्चात् माँ पृथ्वी पर पाद स्पर्श करने से पहले इस मंत्र से पृथ्वी माँ से क्षमा प्रार्थना करनी चाहिए।

समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डिते।

विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्श क्षमस्व मे ।।

पुण्यश्लोकों का स्मरण -

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्वं, सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ।

यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं, तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥ 1 ॥

प्रातर्भजामि मनसो वचसामवाच्यं, वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण ।

यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचुस्तन्देवदेवम- जमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥ 2 ॥

प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं, पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ।

यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्ती, ज्वां भुजङ्गम इव प्रनिभासितं वै ॥ 3 ॥

शङ्करं शङ्कराचार्य केशवं बादरायणम् ।

सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥4॥

महर्षिर्भगवान् व्यासः कृत्वेमां संहितां पुरा ।

श्लोकैश्चतुर्भिर्धर्मात्मा पुत्रमध्यापयच्छुकम् ।। 5 ।।

मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि यान्ति यास्यन्ति चापरे ।। 6 ।।

हर्षस्थान सहस्राणि भयस्थानशतानि च ।

दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम् ॥ 7॥

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे ।

धर्मादश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते ।।8।।

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः ।

धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ।।9।।

इमां भारत सावित्रीं प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।

स भारतफलं प्राप्य परं ब्रह्माधिगच्छति ॥10॥

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमि- सुतो बुधश्च ।

गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।। 11।।

भृगुर्वसिष्ठः क्रतुरंगिराश्च मनुः पुलस्त्यः पुलहश्च गौतमः।

रैभ्यो मरी- चिश्यवनश्च दक्षः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥12॥

सनत्कुमारः सनकः सनन्दनः सनातनोऽप्यासुरिपिङ्गलौ च ।

सप्तस्वराः सप्तरसातलानि कुर्वनन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥13॥

सप्तार्णवाः सप्तकुलाचलाश्च सप्तर्षयो द्वीप- वनानि सप्त।

भूरादिकृत्वा भुवनानि सप्त कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।। 14।।

पृथ्वी सगन्धा सरसास्तथापः स्पर्शी च वायुर्ज्वलनः सतेजाः।

नभः सशब्दं महता सहैते कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ।।15।।

इत्थं प्रभाते परमं पवित्रं पठेत्स्मरेद्वा शृणुयाच्च तद्वत् ।

दुःस्वप्ननाशस्त्विह सुप्रभातं भवेच्च नित्यं भगवत्प्रसादात् ॥16॥

वैन्यं पृथु हैहयमर्जुनं च शाकुन्तलेयं भरतं नलं च ।

रामं च यो वै स्मरति प्रभाते तस्यार्थलाभो विजयश्च हस्ते ।। 17।।

ॐ प्रातरग्निम्प्रातरिन्द्रꣳ हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा

प्रातरश्विना।प्रातर्भगम्पूषणम्ब्रह्मणस्पतिम्प्रातः सोममुत रुद्रꣳ हुवेम॥34.34॥

ॐ प्रातर्जितम्भगमुग्रꣳ हुवेम वयम्पुत्रमदितेर्य्यो विधर्त्ता। आध्रश्चिद्यमन्यमानस्तुरश्चिद्राजा

चिद्यम्भगम्भक्षीत्याह॥34.35॥

ॐ भग प्रणेतर्भगसत्त्यराधो भगेमान्धियमुदवा ददन्नः। भग प्र नो जनय गोभिरश्वैर्भग प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम॥34.36॥

ॐ उतेदानीम्भगवन्तःस्यामोत प्रपित्वऽउत मध्येऽअह्नाम्। उतोदिता मघवन्त्सूर्य्यस्य व्वयन्देवानाꣳ सुमतौ स्याम॥34.37॥

ॐ भगवाँ2।।ऽअस्त्तु देवास्तेन व्वयम्भगवन्तः स्याम। तन्त्वा भग सर्व्वऽइज्जोहवीति स नो भग पुरऽएता भवेह॥34.38॥

ॐ समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय। अर्व्वाचीनं व्वसुविदम्भगन्नो रथमिवाश्वा व्वाजिनऽआ वहन्तु॥34.39॥

ॐ अश्श्वावतीर्ग्गोमतीर्न्नऽउषासो व्वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः। घृतन्दुहाना व्विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥34.40॥

4.3 देवता नमस्कार एवं गो सेवा- तत्पश्चाद् जल से आचमन कर नेत्रों को भी जल से प्रक्षालन करें। इस प्रकार गायों के दर्शन करते हुए अपने देवता को प्रणाम करते हुए उनका स्मरण करना चाहिए। नित्य कर्म करने के बाद यथा शक्ति गायों की सेवा भी करें।

4.4 **सूर्यार्घ्यदान-** सूर्य को जल अर्घ्य देने और सूर्य नमस्कार करने से बल, बुद्धि, विद्या, वैभव, तेज, ओज, पराक्रम प्राप्त होता है अतः अर्घ्य द्वारा विसर्जित जल को दक्षिण नासिका, नेत्र, कान तथा भुजा को स्पर्शित करते हुए इन मन्त्र को बोलना चाहिए।।

'उदसौ सूर्यो अगादुदिदं मामकं वचः।

यथाहं शत्रुहोऽसान्यसपत्नः सपत्नहा।।

सपत्नक्षयणो वृषाभिराष्ट्रो विष सहिः।

यथाहमेषां वीराणां विराजानि जनस्य च।।

आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।

हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

ॐ ऐही सूर्यदेव सहस्त्रांशो तेजो राशि जगत्पते।

अनुकम्पय मां भक्त्या गृहणार्घ्यं दिवाकरः ॥

ॐ सूर्याय नमः, ॐ आदित्याय नमः, ॐ नमो भास्कराय नमः।अर्घ्यं समर्पयामि॥

ॐ आदित्याय विद्महे मार्तण्डाय धीमहि तन्न सूर्यः प्रचोदयात्।

ॐ जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं यन्त्र महाद्युतिम्।

तमोरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः।

ॐ ह्रीं घृणि सूर्य आदित्य श्रीं ॐ।

ध्येय सदा सवितृ मण्डल मध्यवर्ती।

नारायणः सर सिजासर सन्नि विष्टः॥

केयूरवान्मकर कुण्डलवान किरीटी।

हारी हिरण्यमय वपुर्धृत शंख चक्र॥

जपाकुसुम संकाशं काश्यपेयं महाधुतिम्।

तमोऽहरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥

ॐ सूर्याय नमः, ॐ आदित्याय नमः, ॐ नमो भास्कराय नमः। अर्घ्यं समर्पयामि।।

4.5 सूर्यनमस्कार मन्त्र- 1. ॐ मित्राय नमः, 2. ॐ रवये नमः, 3. ॐ सूर्याय नमः, 4.ॐ भानवे नमः, 5.ॐ खगाय नमः, 6. ॐ पूष्णे नमः,7. ॐ हिरण्यगर्भाय नमः, 8. ॐ मरीचये नमः, 9. ॐ आदित्याय नमः, 10.ॐ सवित्रे नमः, 11. ॐ अर्काय नमः, 12. ॐ भास्कराय नमः, 13. ॐ सवितृ सूर्यनारायणाय नमः। योगासन भी करें।

इकाई-5 संस्कार पूजन विधि

5.1 **गुणवत्ता ये युक्त पूजन सामग्री**- सप्तमृत्तिका, कुश, तिल, मधु, घृत, सुवर्णशलाका- स्वर्ण का सिक्का या चम्मच, जौ, गुड- चीनी, हल्दी साबूत और पिसी, जनेऊ, पीली सरसों, रोरी, पीला सिंदूर, पीला और लाल अष्टगन्ध चन्दन, लाल सिन्दूर, सर्वौषधि का डिब्बा, सुपारी, लौंग, इलायची, गोला, हरा नारियल, सूखा नारियल,फल, अक्षत, पंचमेवा, धूपबत्ती, रुई, कपूर, कलावा, बताशे एवं मिष्ठान, गंगाजल, लाल- पीला वस्त्र, लकड़ी की चौकी, ताम्बा-मिट्टी का कलश- सरैया, दीपक, आम की समिधा, नवग्रह समिधा, हवन सामग्री, कमलगट्टा, लाल-पीली धोती, कलम, खड़िया–पट्टी, नूतन कॉपी, थाली, लोटा, कटोरी,चम्मच, कैंची, पंचधातु, ब्राह्मणों के लिए कपड़े एवं पंच पात्र, केले के पत्ते, आम के पत्ते, पान के पत्ते, दूर्वा, फूल- फूल माला, तुलसी दल, दूध-दही, पूजन यज्ञवेदी बनाने हेतु, गाय का गोबर, स्वच्छ मिट्टी, नवीन ईंट, स्वच्छ जल आदि सामग्री की आवश्यकता होती है।

5.2 **पूजन पूर्व सिद्धता-**

सामान्य पूजा विधि

देव पूजन की प्रविधि सामान्यतया अतिथि सत्कार की पुरातन परंपरा के समान है। इसके अन्तर्गत हम भगवान का आवाहन करते हुए विभिन्न सामग्री से उनकी सेवा सत्कार की भावना करते हैं।

इसी के समानांतर दो अन्य बिन्दु भी जुड जाते हैं-

प्रथम- स्वयं का शुद्धीकरण या पवित्रीकरण तथा ध्यान-प्रार्थना

द्वितीय- जिस सामग्री से हम भगवान का पूजन अर्चन करते हैं, उस पूजन सामग्री का भी शुद्धीकरण या पवित्रीकरण

इसके अतिरिक्त स्वयं व वस्तु दोनों में ही दिव्य भाव के आवाहन हेतु भी उसके पूजन का विधान करते हैं।

कर्मकाण्ड के साथ-साथ सामान्य तौर पर जो मन्त्रों के पाठ की प्रक्रिया है, उसमें वैदिक ,पौराणिक एवं लौकिक मन्त्र पढ़े जाते हैं।

कर्मकाण्डीय दृष्टि से पूजन की विभिन्न एवं विशेष परम्पराएँ होती हैं, जिनमें पञ्चोपचार तथा षोडशोपचार पूजन पद्धति सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं।

पूजन विधि के लिए कोई एकरूप प्रक्रिया निर्धारित नहीं की जा सकती, क्योंकि अवसर व देव के अनुसार प्रक्रिया परिवर्तित हो सकती है। विद्वानों का मतैक्य और भक्ति के भाव से विधानीकरण किया जा सकता है।

फिर भी जनसामान्य के पूजन-अर्चन के लिए पूजा पद्धति की सामान्य रूपरेखा निर्धारित की जा सकती है। इसके साथ ही कुछ जनसुविधार्थ सामान्य दिशानिर्देश भी बनाए जा सकते हैं, जैसे-

- प्रत्येक पूजारम्भ के पूर्व निम्नांकित आचार-अवश्य करने चाहिए- आत्मशुद्धि, आसन शुद्धि, पवित्री धारण, पृथ्वी पूजन, संकल्प, दीप पूजन, शंख पूजन, घण्टा पूजन, स्वस्तिवाचन आदि।
- भूमि, वस्त्र आसन आदि स्वच्छ व शुद्ध हों।
- आवश्यकतानुसार चौक रंगोली एवं मण्डप बना बनाएँ।
- मान्यता अनुसार मुहूर्त आदि का विचार किया जा सकता है।
- यजमान पूर्वाभिमुख बैठे, पुरोहित उत्तराभिमुख।
- विवाहित यजमान की पत्नी पति के साथ ग्रंथिबन्धन कर पति की वामंगिनी के रूप में बैठे।
- पूजन के समय आवश्यकतानुसार अंगन्यास, करन्यास, मुद्रा आदि का उपयोग किया जा सकता है.
- औचित्यानुसार विविध देव प्रतीक भी बनाए जा सकते हैं, जैसे-

33 कोटि देवता, त्रिदेव, नवदुर्गा, एकादश रुद्र, नवग्रह, दश दिक्पाल, षोडश लोकपाल, सप्तमातृका, दश महाविद्या, बारह यम, आठ वसु, चौदह मनु, सप्त ऋषि, घृतमातृका, दश अवतार, चौबीस अवतारादि।

ध्यातव्य है कि पूजन के इस प्रकरण के अभ्यास से संकल्प विशेष का परिवर्तन करके विविध पूजा के आयोजन सामान्य रूप से करा सकते हैं।

(पञ्चाङ्ग पूजा विधि)

आचमन- (आत्म शुद्धि के लिए)

ॐ केशवाय नमः

ॐ नारायणाय नमः

ॐ माधवाय नमः।

तीन बार आचमन कर निम्नलिखित मन्त्र को पढ़कर हाथों को धो लें।

ॐ हृषीकेशाय नमः।।

पुनः बाएँ हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ से अपने ऊपर और पूजा सामग्री पर निम्न श्लोक पढ़ते हुए छिड़कें।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।

यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु, ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु।

आसन शुद्धि-

नीचे लिखे मन्त्र का उच्चारण कर आसन को जल से पवित्रीकरण करें-

ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका देवि! त्वं विष्णुना धृता।

त्वं च धारय मां देवि! पवित्रां कुरु चासनम्।।

शिखाबन्धन-

ॐ मानस्तोके तनये मानऽआयुषि मानो गोषु मानोऽअश्वेषुरीरिषः।मानोव्वीरान्त्रुद्रभामिनो व्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे।।16.16।। ॐ चिद्रूपिणि महामाये दिव्यतेजः समन्विते।

तिष्ठ देवि शिखाबद्धे तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे।।

कुश धारण-

निम्न मन्त्र से बाँयें हाथ में तीन कुश तथा दाहिने हाथ में दो कुश धारण करें।

ॐ पवित्रोस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः।

तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुनेतच्छकेयम्।

पुनः दाएँ हाथ को पृथ्वी पर उलटा रखकर "ॐ पृथिव्यै नमः" इससे भूमि की पञ्चोपचार पूजा कर आसन शुद्धि करें।

यजमान तिलक-

पुनः ब्राह्मण यजमान के ललाट पर कुंकुम तिलक करें।

ॐ आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः।

तिलकान्ते प्रयच्छन्तु धर्मकामार्थसिद्धये।

हाथ में लिए पुष्प और अक्षत गणेश एवं गौरी पर चढ़ा दें। पुनः हाथ में पुष्प अक्षत आदि लेकर मंगल श्लोक पढ़े।

जलपात्र का पूजन-

इसके बाद कर्मपात्र में थोड़ा गंगाजल छोड़कर गन्धाक्षत, पुष्प से पूजा कर प्रार्थना करें।

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि! सरस्वति!।

नर्म्मदे! सिन्धु कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

अस्मिन् कलशे सर्वाणि तीर्थान्यावाहयामि नमस्करोमि।

कर्मपात्र का पूजन करके उसके जल से सभी पूजा वस्तुओं पर छिड़कें.

घृतदीप पूजन-

"वह्निदैवतायै दीपपात्राय नमः" से पात्र की पूजा कर ईशान दिशा में घी का दीपक जलाकर अक्षत के ऊपर रखकर

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्य्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्य्यः स्वाहा।

अग्निर्व्वर्च्चो ज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा सूर्य्योव्वर्चोज्योतिर्व्वर्च्चः स्वाहा ।।

ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा।।3.9।।

भो दीप देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्।

यावत्पूजासमाप्तिः स्यात्तावदत्रा स्थिरो भव।।

ॐ भूर्भुवः स्वः दीपस्थदेवतायै नमः आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि।

शंखपूजन

शंख को चन्दन से लेपकर देवता के वायीं ओर पुष्प पर रखकर शंख मुद्रा करें।

ॐ शङ्खं चन्द्रार्कदैवत्यं वरुणं चाधिदैवतम्।

पृष्ठे प्रजापतिं विद्यादग्रे गङ्गासरस्वती।।

त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि वासुदेवस्य चाज्ञया।

शंखे तिष्ठन्ति वै नित्यं तस्माच्छंखं प्रपूजयेत्।।

त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे।

नमितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य! नमोऽस्तुते।।

पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि तन्नः शंखः प्रचोदयात्।

ॐ भूर्भवः स्वः शंखस्थदेवतायै नमः

शंखस्थदेवतामावाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पयामि नमस्करोमि।

घण्टा पूजन-

ॐ सर्ववाद्यमयीघण्टायै नमः,

आगमार्थन्तु देवानां गमनार्थन्तु रक्षसाम्।

कुरु घण्टे वरं नादं देवतास्थानसन्निधौ।।

ॐ भूर्भुवः स्वः घण्टास्थाय गरुडाय नमः गरुडमावाहयामि सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि।

गरुडमुद्रा दिखाकर घण्टा बजाएँ। दीपक के दाहिनी ओर स्थापित कर दें।

5.3 गणेशादि स्मरण एवं आवाहन- हाथ में अक्षत लेकर श्रद्धापूर्वक गणेशजी का आवाहन करें।

ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे

निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्ब्भधमात्त्वमजासि गर्ब्भधम्।। 23.19।।

एह्येहि हेरम्ब महेशपुत्र! समस्तविघ्नौघविनाशदक्ष!।

ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहिताय गणपतये नमः, गणपतिमावाहयामि, स्थापयामि, पूजयामि च।

हाथ में स्थित अक्षतों को गणेश जी को अर्पण करें।

पुनः अक्षत लेकर गणेशजी की दाहिनी ओर गौरी जी का आवाहन करें।

3.4 गणेशपूजनादि नान्दीश्राद्धों का प्रयोग

श्रीमन्महागणाधिपतये नमः। लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः। शचीपुरन्दराभ्यां नमः। मातापितृचरणकमलेभ्यो नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः। कुलदेवताभ्यो नमः।ग्रामदेवताभ्यो नमः। वास्तुदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।

लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः।। 1।।

वक्रतुण्ड! महाकाय! कोटिसूर्यसमप्रभ ! ।

निर्विघ्नं कुरु मे देव! सर्वकार्येषु सर्वदा।। 2।।

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।

द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि।। 3।।

विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।

सङ्ग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।। 4।।

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।

प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।। 5।।

अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुराऽसुरैः ।

सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः।। 6।।

सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके!।

शरण्ये त्रयम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते।। 7।।

सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम्।

येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनो हरिः।। 8।।

तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव ।

विद्यावलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि।। 9।।

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः।

येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः।।10।।

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।

तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।11।।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।12।।

स्मृतेः सकलकल्याणं भाजनं यत्र जायते ।

पुरुषं तमजं नित्यं ब्रजामि शरणं हरिम्।।13।।

सर्वेष्वारम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः ।

देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः।।14।।

विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम् ।

वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम्।।15।।

कृतमङ्गलस्नानः स्वलङ्कृतः सम्भृतमङ्गलसम्भारः कृतनिर्णेजनान्त- पञ्चमहायज्ञान्तनित्यक्रियः परिहिताहतसोत्तरीयवासा यजमानो मङ्गल- रङ्गवल्लीमण्डितशुद्धस्थले श्रीपर्ण्यादिप्रशस्तदारुनिर्मिते कुशोत्तरकम्बलाद्यास्तृते स्वासने ऊर्णवस्त्राच्छादिते पीठे प्राङ्मुख उपविश्य पत्नीं स्वदक्षिणतः प्राङ्मुखीमुपवेशयेत् ।। शिखां बद्धा कुशपवित्रधारणम् पवित्रे- स्त्थो0 ॥ **आचम्य प्राणानायम्य** ।।

यजमानललाटे तिलकं कुर्यात् ॐस्वस्तिनऽइन्द्रो...। भद्रसूक्तं पठेत् ।

3.4 **मङ्गलसूक्तम्-** ॐआ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः÷। देवानोयथा सदमिद् वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥॥25.14॥ देवानाम्भद्रासुमतिर्ऋजूयतान् देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयन्देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥25.15॥ तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिन्दक्षमस्रिधम्। अर्य्यमणँ वरुणꣳ सोममश्विना सरस्वतीनः सुभगा मयस्करत् ॥25.16॥ तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजन्तन्माता पृथिवी तत्पिताद्यौः।तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतन्धिष्ण्यायुवम् ।।25.17।। तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधेरक्षितापायुरदब्धः स्वस्तये ।।25.18।। स्वस्ति नऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः÷ पूषा विश्ववेदाः।स्वस्ति नस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥25.19॥ पृषदश्वामरुतः पृश्निमातरः शुभँयावानो विदथेषुजग्मयः।अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवाऽअवसागमन्निह॥25.20॥ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रम्पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितँ य्यदायु÷॥21.25॥ शतमिन्नु शरदोऽअन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसन्तनूनाम्। पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः॥22.25॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदिति र्म्माता स पिता स पुत्रः।विश्वे देवाऽअदितिः पञ्च जनाऽअदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥23.25॥ ॐ द्यौः **शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः÷ पृथिवी**

शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ॥ वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥36.17 ॥ ॐ यतोयतः समीहसे ततो नोऽअभयङ्कुरु ॥ शन्नः कुरु प्रजाभ्योभयन्नः पशुभ्यः ।।36.22।।सुशान्तिर्भवतु।।

। ततः सुमुखश्चेत्यादीनां गणेशगुर्वादीन्नमस्कृत्य। एतत् सङ्कल्पं कुर्यात्।

3.5 **सङ्कल्पः**- विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः। श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे भारतवर्षे जम्बूद्वीपे अस्मिन्वर्तमाने अमुकनामसंवत्सरे अमुकायने अमुकऋतौ अनुकमासे अमुकपक्षे अमुक तिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थिते श्रीसूर्ये अमुकराशिस्थिते देवराजगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थान स्थितेषु सत्सु एवंगुणविशेषेण विशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुक गोत्रोत्पन्नः अमुक नाम्नः (शर्मा,वर्मा,दास,गुप्तः) अहम् ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थम् मम समस्त ऐश्वर्याभिवृद्ध्यर्थम् अप्राप्तलक्ष्मी प्राप्त्यर्थम् प्राप्तलक्ष्म्याश्चिरकालसंरक्षणार्थं सकलमनेप्सितकामनासंसिद्ध्यर्थं लोके सभायां राजद्वारे वा सर्वत्र यशोविजयलाभादिप्राप्त्यर्थम् मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा सकलदुरितोपशमनार्थं मम सभार्यस्य सपुत्रस्य सबान्धवस्य अखिलकुटुम्बसहितस्य सपशोःसमस्तभयव्याधिजरापीडामृत्युपरिहारद्वारा आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं मम जन्मराशेः अखिलकुटुम्बस्य वा जन्मराशेः सकाशात् येकेचित् विरुद्धचतुर्थाष्टमद्वादशस्थानस्थित क्रूरग्रहाः तैः सूचितं सूचयिष्यमाणं च यत्सर्वारिष्टं तद्विनाशद्वारा एकादशस्थानस्थितवत् शुभफलप्राप्त्यर्थं पुत्रपौत्रादिसन्ततेः अविच्छिन्नवृद्ध्यर्थम् आदित्यादिनवग्रहानुकूलतासिद्ध्यर्थम् इन्द्रादिदशदिक्पाल प्रसन्नतासिद्ध्यर्थम् आधिदैविक आधिभौतिक आध्यात्मिक त्रिविधतापोपशमनार्थम् धर्मार्थकाममोक्षफलावाप्त्यर्थं च श्री................देवताप्रीत्यर्थं यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यैः ध्यानावाहनादिषोडशोपचारैः अन्योपचारैश्च शेषेषु ग्रहेषु यथायथं राशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं गुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं मम सुतस्य करिष्यमाण संस्काराख्यं...... करिष्ये।।

पुनर्जलमादाय - तदङ्गन्तया गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनम् अविघ्नपूजनं मण्डपदेवतापूजनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारापूजनम् आयुष्य- मन्त्रजपं नान्दीश्राद्धं दिग्रक्षणं पञ्चगव्यकरणं भूमिपूजनम् च करिष्ये।

तदङ्गत्वेन निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं श्रीगणपत्यादिपूजनं च करिष्ये।

तत्रादौ दीपशंखघण्टाद्यर्चनं च करिष्ये।

3.5 **गणपतिपूजनम्-** ताम्रपात्रे सिद्धिबुद्धिसहितं महागणपतिं संस्थाप्य ध्यानम्- उच्चैर्ब्रह्माण्डखण्डद्वितयसहचरं कुम्भयुग्मं दधानं प्रे नागारिपक्षप्रतिभटविकट श्रोत्रतालाभिरामम्।। देवं शम्भोरपत्यं भुजगपतितनुस्पर्धिवर्धिष्णुहस्तं ध्याये पूजार्थमीशं गणपतिममलं धीश्वरं कुञ्जरास्यम्॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः ध्यायामि।।

आवाहनम्- गणानान्त्वा...। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः आवाहयामि।।

आसनम्-वर्ष्मोऽस्मिसमानानायुध्यतामिवसूर्यः। इमन्तमभितिष्ठामियोमाश्चाभिदासति। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः आसनं समर्पयामि।।

पाद्यम्-ॐ एतावा॑नस्य महि॒मातो॒ ज्याया॑ँश्च॒ पूरु॑षः। पादो॑ऽस्य॒ विश्वा॑ भू॒तानि॑ त्रि॒पाद॑स्या॒मृतं॑ दि॒वि ॥ 31.3॥

ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः पाद्यं समर्पयामि।।

अर्घ्यम् ॐ धाम॑न्ते **विश्व॒म्भुव॑न॒मधि॑ श्रि॒तम॒न्तः॑ स॑मु॒द्रे हृ॒द्य॒न्तरायु॑षि। अ॒पामनी॑के समि॒थे यऽआभृ॑त॒स्तम॑श्याम॒ मधु॑मन्तन्तऽऊ॒र्म्मिम्॒** ॥ 17.99॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः अर्घ्यं समर्पयामि॥

आचमनीयम्-ॐ इ॒मम्मे॑ वरुणश्रु॒धी ह॒व॑म॒द्या च॑ मृडय। त्वाम॑व॒स्युरा च॑के॥21.1॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः आचमनीयं समर्पयामि।

स्नानम् - ॐ **तस्मा॑द्य॒ज्ञात्स॑र्व॒हुत॒ः सम्भृ॑त॒म्पृषदा॒ज्यम्॥ प॒शूँस्ताँश्च॑क्रे वाय॒व्याना॒रण्या ग्ग्रा॒म्याश्च॒ ये**॥ 31.6 ।। गङ्गा सरस्वतीरेवापयोष्णीनर्मदाजलैः। स्नापितोऽसि मया देवह्यतः शान्ति कुरुष्व मे। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः स्नानं समर्पयामि।। एकतन्त्रेण पञ्चामृतस्नानम् -

ॐ पञ्च॑ न॒द्यः॒ सर॑स्वती॒मपि॑यन्ति॒ सस्रो॑तसः।

सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेभवत्सरित् ॥34.11

पयो दधि घृतं चैव मधुं च शर्करायुतम् । पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।। ॐ भूर्भुवः स्वः श्रीशिवपञ्चायतनदेवताभ्यो नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि ।। अथवा पृथक्पृथक्मन्त्रेण पञ्चामृतस्नानम् ।

पयःस्नानम्- ॐपयसोरूपं **यद्यवादद्ध्नोरूपङ्कर्कन्धूनि।। सोमस्य रूपंव्वाजिनःसौम्यस्यरूपयामिक्षाम्॥**21.19॥ ॐ **पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः॥ पयस्वतीःप्प्रदिशः सन्तु मह्यम्** ॥18.36।।

ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः पयःस्नानं समर्पयामि। पयःस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं स0। शुद्धोदकनानान्ते आचमनीय समर्पयामि॥

दधिस्नानम्-ॐ **दधिक्क्राव्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्य व्वाजिनः ॥ सुरभि नो मुखा करत्प्र णऽआयूᳬषि तारिषत्**।।23.32।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः दधिस्नानं समर्पयामि।।

घृतस्नानम्- ॐ घृतेनाञ्जन्त्सम्पथो देवयानान्प्रजानभवाश्रयष्येवाज्यप्येतु देवान्।अनु त्त्वा सप्ते प्रदिशः सचन्ताᳬ स्वधामस्मै यजमानाय धेहि॥2.29॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः घृतस्नानं समर्पयामि।

मधुस्नानम्- ॐमधु व्वाताऽऋतायुते मधु क्क्षरन्ति सिन्धवः॥ माद्धीर्नः सन्त्वोषधीः॥ ॥13.28॥ स्वाहामरुद्भि परिश्रीयस्वद्भिव सुस्पृर्शस्पाहि। मधुमधुमधु।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः मधुस्नानं समर्पयामि।।

शर्करास्नानम् - ॐ **अपाᳬ रसमुद्वयसᳬ सूर्य्ये सन्तᳬ समाहितम् ॥ अपाᳬ रसस्य यो रसस्तंवो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्राय त्वा जुष्टङ्गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्**।।9.3।।

ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः शर्करास्नानं समर्पयामि॥

गन्धोदकस्नानम्- ॐ **गन्धर्वस्त्वा विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्युग्निरिड ऽईडितः। इन्द्रस्य बाहुरसि दक्षिणो विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्युग्निरिडऽईडितः। मित्रावरुणौ त्वोत्तरतः परिधत्तान्ध्रुवेण धर्म्मणा विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्युग्निरिडऽईडितः।**।2.3।।

ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः गन्धोदकस्नानं समर्पयामि।

उद्वर्तनस्नानम् - ॐ **अदः शुना तेऽअदः शुः पृच्यतां परुषा परुः। गन्धस्ते सोममवतु मदाय रसोऽअच्युतः॥**2.27॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः उद्वर्तनस्नानं समर्पयामि॥

सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्प्य निर्माल्यमुत्तरे विसृज्य अभिषेकः ॐआपोहि. योन0 तस्म्मा0 ॐ अमृताभिषेकोऽस्तु। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः अभिषेकस्नानं समर्पयामि।

शुद्धोदकस्नानम्- ॐ **शुद्धवालः सर्ववशुद्धवालो मणिवालुस्तऽआश्विनाः श्येतः श्येताक्षोरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामाऽ अवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्ज्जन्याः**।34.3।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि।। गणेशं वस्त्रेण प्रमृज्य रक्तवस्त्रप्रसारिते मृन्मये पीठे पट्टे वा अरुणाक्षतैर्गोधूमेर्वा कृतेऽष्टदले पद्मे गन्धानुलेपनपूर्वकं संस्थाप्य

वस्त्रम् ॐ **सुजातो ज्योतिषा सह शर्म्म वरूथमासदत्स्वः॥ वासोऽअग्ने विश्वरूपꣳ संव्ययस्व विभावसो।।**11.40।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः वस्त्रं समर्पयामि। वस्त्रान्ते आसनं समर्पयामि ॥

उपवीतम्- यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलबस्तु तेजः॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।। यज्ञोपवीतान्ते आ. समर्पयामि॥

गन्धम् ॐ **त्वाङ्गन्धर्वाऽअखनꣳस्त्वामिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः ॥ त्वामौषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत** ।12.98।। श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्। विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः गन्धं समर्पयामि॥

अक्षताः- ॐ **अक्षन्नमीमदन्त ह्यवप्रिया ऽअधूषत। अस्तोषत स्व- भानवो विप्रा नविष्ठया मती योजा न्विन्द्र ते हरी।।**3.51।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः अक्षतान्समर्पयामि।

पुष्पाणि- ॐ यत्पुरुषं..।।ॐ ओषधीः प्रतिमोदध्वम्पुष्पवतीः प्रसूवरीः॥ अश्वाऽइव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ।।12.77।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः पुष्पाणि समर्पयामि॥

दूर्वाङ्कराः- काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषःपरुषस्परि। एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च॥13.20।। ॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः दूर्वाङ्कुरान्समर्पयामि॥

सौभाग्यद्रव्याणि- ॐ अहिरिव भोगैः पर्य्येति बाहुञ्ज्याया हेतिम्परिबाधमानः हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमांसम्परि पातु विश्वतः॥29.51॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः सौभाग्यद्रव्याणि समर्पयामि।

धूपः- ॐ अश्वस्यत्वा वृष्णः शक्ना धूपयामि देवयजने पृथिव्याः। मखायत्त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे।अश्वस्य त्वा वृष्णः शक्ना धूपयामि देवयजने पृथिव्याः।मखाय त्वामखस्य त्वा शीर्ष्णे।अश्वस्यत्वा वृष्णः शक्ना धूपयामि देवयजने पृथिव्याः। मखायत्त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे। मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे।।37.9॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः धूपमाघ्रापयामि।

दीपः- ॐ चन्द्रमाऽअप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि। रयिम्पिशङ्गम्बहुलम्पुरुस्पृहः हरिरेति कनिक्रदत्॥33. 90॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः दीपं दर्शयामि।।

नैवेद्यम्- ॐअन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्रप्र दातारन्तारिषऽऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे॥ ॥11. 83॥ गायत्री मन्त्रेण सम्मोक्ष्य घेनूमुद्रां प्रदश्र्य ग्रासमुद्रया ॐप्राणाय स्वाहा ॐ अपानाय स्वाहा ॐ ध्यानाय स्वाहा ॐ उदानाय स्वाहा ॐसमानाय स्वाहा। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः नैवेद्यं निवेद्यामि। पूर्वापोशनं समर्पयामि। नैवेद्यमध्ये पानीयम्-

एलोशीरलवङ्गादिकर्पूरपरिवासितम्। प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः मध्येपानीयं समर्पयामि। उत्तरापोशनं समर्पयामि। हस्तप्रक्षालनं समर्पयामि। मुखप्रक्षालनं समर्पयामि। आचमनीयं समर्पयामि। करोद्वर्तनार्थे गन्धं समर्पयामि। **मुखवासार्थे ताम्बूलं**-ॐ उतस्म्मास्य द्द्रवतस्तुरण्ण्यत॒ पूर्ण्णन्न वेरनुवातिप्प्रगर्द्धिन॑÷।। श्येनस्येव द्ध्रजतोऽअङ्कसम्परि दधिक्क्राव्ण्ण॑÷ सहोर्ज्जा तरित्त्रत॒स्वाहा।।9.15।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः ताम्बूलं समर्पयामि॥

फलम्- ॐया॒ फलिनीर्य्याऽअफलाऽअपुष्प्पा याश्च॑ पुष्प्पिणी॑। बृहस्प्पतिप्प्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व॒ हस॑।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः फलं समर्पयामि॥

दक्षिणा- ॐ यद्दत्तं य्यत्परादानं य्यत्पूर्त्तं य्याश्चदक्षिणा॑। तदग्निर्वैश्श्वकर्म्मण॒ स्वर्द्देवेषु नोदधत्॥18.64॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः सुवर्णपुष्पदक्षिणां समर्पयामि॥

कर्पूरार्तिक्यम्- ॐ आ रात्त्रि पात्र्थिव॒ रज॑÷ पितुरप्प्रायि धामभि॑। दिव॒ सदा॑सि बृहती वि तिष्ठ्सऽआ त्त्वेषन्वर्त्तते तम॑÷।।34.32।। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः कर्पूरार्तिक्यं दर्शयामि॥

मन्त्रपुष्पाञ्जलिः- अञ्जलौ पुष्पाण्यादाय तिष्ठन् ॐनमोगणेब्भ्यो गणपतिब्भ्यश्च वोनमोनमोव्व्रातेब्भ्योव्व्रातपतिब्भ्यश्चवोनमोनमोगृत्त्सेब्भ्योगृत्त्सपतिब्भ्यश्चवोनमोनमोव्विरूपेब्भ्यो व्विश्श्वरूपेब्भ्यश्चवोनमोनम॒सेनाब्भ्य॑॥16.25॥ ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि। प्रदक्षिणा-सप्तास्यो0 ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि ॥ अर्घ्यपात्रे जलं प्रपूर्य रक्तचन्दनपुष्पाक्षतसाहितं नारिकेलं च धृत्वा विशेषार्घः रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक। भक्तानामभयंकर्ता त्राता भव भवार्णवात्। द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो। वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितं वाञ्छितार्यद।। अनेन सफलार्घेण फलदोऽस्तु सदा मम। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः विशेषार्घं समर्पयामि।

प्रार्थना-विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लम्बोदराय सकलाय जगद्धिताय। नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते। नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः। नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय

ते नमः। विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे। भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायकं लम्बोदरं नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय! निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा। त्वां विघ्नशत्रुदल नेति च सुन्दरेति भक्तप्रियेति सुखदेति वरप्रदेति। विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव। ॐभूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतये नमः प्रार्थनापूर्वकं नमस्करोमि। अनया पूजया सिद्धिबुद्धिसहितः महागणपतिः साङ्गः सपरिवारः प्रीयतां न मम।॥ इतिगणपतिपूजनम् ।।

अथ पुण्याहवाचप्रयोगः- स्वपुरतः शुद्धायां भूमौ पञ्चवर्णैस्तन्दुलैर्वाऽष्टदलं कर्तव्यम्। तत्र भूमिं स्पृष्ट्वा ॐमहीद्यौः पृथिवीचनऽइमँयज्ञम्मिमिक्षताम्॥ पिपृतान्नोभरीमभिः॥8.32॥ तत्र यवप्रक्षेपः- ॐओषधय समवदन्तसोमेनसहराज्ञा। यस्म्मै कृणोतिब्राह्मणस्तराजन्पारयामसि।।93.12।।

अष्टदलोपरि कलशस्थापनम्- ॐआजिग्घ्रकलशम्मह्यात्त्वाविशन्त्विन्दवः ।पुनरुर्ज्जानिवर्त्तस्वसानः सहस्रन्धुक्क्ष्वोरुधारापयस्वतीपुनर्म्माविशताद्रयिः ॥8. 42॥

कलशेजलपूर्णम्- ॐव्वरुणस्योत्तम्भनमसिव्वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थोव्वरुणस्यऽऋतसदन्न्यसि व्वरुणस्यऽ ऋतसदनमसि व्वरुणस्यऽऋतसदनमासीद॥4. 36॥

गन्धप्रक्षेपः- ॐत्वाङ्गन्धर्व्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्त्वाम्बृहस्प्पतिः। त्वामोषधेसोमोराजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत।।12.98॥

धान्यप्रक्षेपः- ॐधान्न्य मसिधिनुहिदेवान्न्प्राणायत्त्वोदानाय त्वाव्व्यानाय त्त्वा। दीर्ग्घामनु प्रसितिमायुषे धान्देवो वः सविता हिरण्ण्यपाणिः प्रतिगृब्भ्णात्त्वच्छिद्द्रेण पाणिनाचक्षुषे त्त्वा महीनाम्पयोऽसि॥1.20॥

सर्वौषधीप्रक्षेपः- ॐया ओषधीः पूर्व्वा जाता देवेब्भ्यस्त्रियुगम्पुरा। मनै नु बब्भ्रूणामहः शतन्धामानि सप्त च ॥12.75॥

दूर्वाप्रक्षेपः- काण्डात्त्काण्डात्त्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवा नो दूर्व्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च॥13.20।।

पञ्चपल्लवमक्षेपः- ॐअश्श्वत्थे वो निषदनम्पर्ण्णे व्वोव्वसतिष्कृता। गोभाजऽइत्त्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्॥12. 79॥

सप्तमृदप्रक्षेपः-ॐस्योना पृथिवि नो भवानृक्क्षरा निवेशनी। यच्छा नः शर्म्मसप्रथाः॥36.13॥

फलप्रक्षेपः- ॐया॒ फ॒लिनी॒र्य्याऽअ॑फ॒लाऽअ॑पु॒ष्पायाश्च॑पु॒ष्पिणीः। बृ॒ह॒स्पति॑प्रसूता॒स्ता नो॑ मु॒ञ्चन्त्वःहँसः॥12.89॥

पञ्चरत्नप्रक्षेपः- ॐपरि॒ वाज॑पतिः क॒विर॒ग्निर्ह॒व्व्यान्य॑क्क्रमीत्। दध॒द्रत्ना॑निदा॒शुषे॑॥11.25॥

हिरण्यप्रक्षेपः- ॐ हि॒र॒ण्य॒ग॒र्भः सम॑वर्त्तता॒ग्ग्रे॑भू॒तस्य॑जा॒तः पति॒रेक॑ऽआसीत्। सदा॑धार पृथि॒वीन्द्यामु॒तेमाङ्कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ व्विधेम॥13.4॥ रक्तसूत्रेण वस्त्रेण च वेष्टयेत् - ॐयुवासुवासाःपरिवीतऽआगात्सऽउश्रेयान्भवतिजायमानः।। तंधीरासः कवयऽउन्नयन्तिस्वाध्योमनसादेवयन्तः। पा.गृ.का.2कं.2मं.9॥ पूर्णपात्रमुपरि न्यसेत् ॐ पू॒र्णा॑द॒र्व्वि परा॑ पत॒सुपू॑र्ण्णा॒ पु॒नरा॑पत। व्व॒स्नेव॒ व्विक्क्रीणावहा॒ऽइष॒मूर्ज॑ꣳ शतक्कतो।।3.49॥ वरुणमावाहयेत ॐ तत्त्वायामीत्यस्य शुनः शेपऋषिः त्रिष्टुप्छन्दः वरणोदेवता वरुणावाहने विनियोगः ॐ तत्त्वा॑यामि॒ ब्रह्म॒म्म॑णा॒व्वन्द॑मान॒स्त्तदाशा॒स्ते॒यज॑मानो॒ह॒विर्भिः॑। अहे॑डमानोव्वरु॒णेह॒बो॒द्ध्युरु॑शःस॒मान॒ऽआयुः॒प्प्रमो॑षीः।।18.49।। भूर्भुवः स्वः अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गसपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि स्यापयामि। **प्रतिष्ठापनम्**- ॐ मनो॑ज्जू॒तिर्ज्जु॑षता॒माज्ज्य॑स्य॒ बृह॒स्पति॒र्य॒ज्ञमि॒मन्त॑नो॒त्त्वरि॑ष्टꣳ य॒ज्ञꣳ समि॒मन्द॑धातु। व्विश्वे॑ दे॒वास॑ऽइ॒ह मा॑दयन्ता॒मो३म्प्रति॑ष्ठ॥2.13 ॥ ॐवरुणाय नमः वरुण सुप्रतिष्ठितो वरदो भव। ॐभूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः चन्दनं समर्पयामि। इत्यादिपश्चोपचारैः सम्पूज्य तत्त्वायामीति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य अनेन पूजनेन वरुणः प्रीयताम् ।। ततः अनामिकया कलशं स्पृष्ट्वा अभिमन्त्रयेत्-कलशस्य मुखे.। कुक्षौ तु...। अङ्गैश्च सहिता.। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।। ततो गायत्र्यादिभ्यो नमः इत्यनेन पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य कलश प्रार्थयेत्- देवदानव संवादे.। **त्वत्तोये.**। **शिवः स्वयं.**। **त्वयि तिष्ठन्ति.**। सान्निध्यं कुरुमे देव प्रसन्नो भव सर्वदा। नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय। सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते। पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक। पुण्याहवाचनं यावत्तावत्त्वं सन्निभो भव। ततः स्वस्तिवाचनार्थं युग्मविपान्सम्पूज्य। अवनिकृत- जानुमण्डलः कमलमुकुल सदृशमञ्जलिं शिरस्याघाय दक्षिणेन पाणिना स्वर्णपूर्णकलशं धारयित्वा वदेत् ॐ त्रीणि॑ प॒दा व्विच॑क्रमे॒ व्विष्ष्णु॒र्ग्गो॒पाऽअदा॑ब्भ्यः।अतो॒ धर्म्मा॑णि धा॒रय॑न्॥34.43॥ दीर्घा नागा नद्यो गिर- यस्त्रीणि विष्णुपदानि च ॥ तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्या दीर्घमायुरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु ।। विप्रा वदेयुः तेनायुः

प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु एवं वारत्रयं कृत्वा कलशं भूमौ धान्यराशौ संस्थाप्य। ब्राह्मणानां हस्ते सुप्रोक्षितमस्तु। शिवा आपः सन्तु। सन्तु शिवा आपः। सौमनस्यमस्तु। अस्तु सौमनस्यम्॥ अक्षतं चारिष्टं चास्तु। अस्त्वक्षतमरिष्टं च। गन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐगन्धाः पान्तु सौमङ्गल्यं चास्तु।। अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु। पुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐपुष्पाणि पान्तु सौश्रियमस्तु। ताम्बूलानि पान्तु ऐश्वर्यमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐताम्बूलानि पान्तु ऐश्वर्यमस्तु। पूगीफलानि पान्तु बहुफलमस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐपूगीफलानि पान्तु बहुफलमस्तु। दक्षिणाः पान्तु बहुदेयं चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐदक्षिणाः पान्तु बहुदेयं चास्तु। ॐ दीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं वहुपुत्रश्चास्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु। ब्राह्मणा वदेयुः- ॐदीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं चास्तु। यजमानो वदेत्-यकृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहमोङ्कारमादिङ्कृत्वा ऋग्यजुःसामाथर्वणाशीर्वचनं वहुऋषि मतं समनुज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये। ॐवाच्यताम्। अथाशीर्वादः। ब्राह्मणानां हस्तेष्वक्षतान्दद्यात्॥ यजुः-ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः । भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिः। व्यशेम देवहितँय्यदायुः ।।21.25।। ॐदेवानाम्भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयन्देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे ।।25.15॥ ॐ दीर्घायुस्त्तऽओषधेखनितायस्म्मै च त्त्वा खनाम्यहम्। अथो त्त्वन्दीर्घायुर्भूत्त्वा शतवल्शाव्विरोहतात्।।12.100।। ऋक् ॐ द्रविणोदाद्रविणसस्तुरस्यद्रविणोदाःसनरस्य प्रयसत्।। द्रविणोदावीरवतीमिषनोद्रविणोदारासतेदीर्घ मायुः॥अष्टक(1/4.7) ॐयजुः- द्रविणोदाः पिपीषतिजुहोतप्रचं तिष्ट्ठत। नेष्ट्टादृतुभिरिष्यत॥26.22॥ ऋक् ॐ सवितापश्चात्सवितापुरस्तात्सवतोत्तरात्तात्सवितायरात्तात्॥ सवितानः सुवतुसर्वतार्तिसवितानोरासतां दीर्घमायुः॥7/1.8॥ यजुः- ॐसविता त्त्वा सवानाꣳ सुवताम्ग्गिर्गृहपतीनाꣳ सोमो व्वनस्पतीनाम्। बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रो ज्यैष्ट्थ्याय रुद्रः पशुभ्यो मित्रः सत्त्यो व्वरुणो धर्म्मपतीनाम्॥9.39॥ ऋकू- ॐनवोनवोभ- वतिजायमानोह्नां केतुरुष सामेत्यग्रम्।। भागंदेवेभ्यो विदधात्यायन्प्रचन्द्र मास्तिरतैदर्घिमायुः॥8/23.3॥ यजुः- ॐ न तद्रक्षाꣳसि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳ

ह्येतत्। योबिभर्त्तिदाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुꣳ समनुष्येषु कृणुते दीर्घमायु÷॥34.51॥ ऋक्- ॐ उच्चादिविदक्षिणावन्तोऽअस्थुर्येऽअंश्वदाः सहतेसूर्येण। हिरण्यदाऽअमृतत्वंभ जंतेवासोदाः सौमप्रतिरंतऽआर्युः।।8.3.6।। यजुः- ॐउच्चाते जातमन्धसोदिविसद्भूम्याददे। उग्र शर्म्ममहि श्रवश्रव॥8.3.6॥ इत्याशीर्वादः॥ व्रतजपनियमतपः स्वाध्यायक्रतुदयादमदानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्॥ समाहितमनसः स्मः॥प्रसीदन्तु भवन्तः॥प्रसन्नाः स्मः।। ॐशान्तिरस्तु॥अस्तु!॥ ॐतुष्टिरस्तु॥ ॐतुष्टिरस्तु। ॐद्दद्धिरस्तु। ॐअवि- घ्नमस्तु। ॐआयुष्यमस्तु। ॐआरोग्यमस्तु। ॐशिवं कर्मास्तु। ॐकर्मसमृद्धिरस्तु। ॐवेदसमृद्धिरस्तु। ॐ शास्त्रसमृद्धिरस्तु। ॐधनधान्यसमृद्धिरस्तु। ॐपुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु।इष्टसम्पदस्तु। ॐअरिष्टनिरसनमस्तु।ॐयत्पापं रोगमशुभमकल्याणं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु।। ॐयच्छ्रेयस्तदस्तु। ॐउत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु। ॐउत्तरोत्तरमहरहरभिद्दद्धिरस्तु। ॐउत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम्।। ॐतिथिकरणमुहूर्त्तनक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु। पात्रे उदकसेकः। ॐतिथिकरणमुहूर्त्तनक्षत्रग्रहलनाधिदेवताः प्रीयन्ताम्। ॐ तिथिकरणे समुहूर्त्ते सनक्षत्रे सग्रहे साधिदेवते प्रीयेताम्। ॐदुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम् ॥ ॐअग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्। ॐइन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ॐ माहेश्वरीपुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम्। ॐअरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम् । ॐ विष्णुपुरोगाः सर्वे देवाः प्रीयन्ताम्। ॐब्रह्म पुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम्। ॐ ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम्। ॐश्रीसरस्वत्यौ प्रीयेताम्। ॐश्रद्धामेधे प्रीयेताम्। ॐ भगवती कात्यायनी प्रीयेताम्। ॐभगवती माहेश्वरी प्रीयताम् । ॐ भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती सिद्धिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। ॐ भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् ॥ ॐ सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ ॐ सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। बहिः- ॐ हताश्च ब्रह्मद्विषः। ॐ हताश्च परिपन्थिनः। ॐहताश्च विघ्नकर्तारः। ॐशत्रवः पराभवं यान्तु। ॐशाम्यन्तु घोराणि। ॐशाम्यन्तु पापानि। ॐशाम्यन्त्वीतयः। पुनः पात्रे-ॐ शुभानि वर्द्धन्ताम्। ॐ शिवा आपः सन्तु। ॐशिवा ऋतवः सन्तु। ॐशिवा ओषधयः सन्तु। ॐशिवा नद्यः सन्तु। ॐशिवा गिरयः सन्तु।ॐशिवा अतिथयः सन्तु। ॐशिवा अग्नयः सन्तु। ॐशिवा आहुतयः सन्तु। ॐ अहोरात्रे शिवे स्याताम्। यजुः- ॐ निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्ताँ योगक्षेमो नः÷ कल्पताम्॥22.22॥ ब्राह्मणम्- ॐ निकामेनिकामेन पर्जन्योवर्षात्वितिनिकामे निकामेवैतत्रपर्जन्योवर्षतियत्रैतेनयज्ञेन यजन्ते

फलवत्योनऽऔषधय पच्यन्तामितिफलवत्योवैतत्रौषधय पच्यन्तेयत्रैतेन यज्ञेनयजन्तेयोगक्षेमोन कल्पतामितियोगक्षेमो वैतत्र कल्पते यत्रैतेनयज्ञेन यजन्तेतस्माद्य त्रैतेनयज्ञेन यजन्ते क्लृप्त प्रजानां योगक्षेमोभवति। ॐ शुक्राङ्गारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहु केतुसोमसहिता आदित्यपुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्। ॐ भगवान्नारायणः प्रीयताम्। ॐ भगवान्पर्जन्यः प्रीयताम्। ॐ भगवान्स्वामी महासेनः प्रीयताम्। ॐ पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु। ॐ पुण्याहकालान्वाचायष्ये। ॐ वाच्यताम्। ब्राह्म्यं पुण्यं महद्यच्च सृष्टयुत्पादनकारकम्। वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याह ब्रुवन्तु नः।।1।। भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ..... कर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐ अस्तु पुण्याहम्। एवं त्रिः ॥ ऋक् ॐ उद्गातेवशकुने सामगायसि ब्रह्मपुत्रऽइवसवनेषु शंससि। वृषदवाजीशिशुंमतीरपीत्या सर्वतोनः शकुने भद्रमावदाविश्वतोनःशकुने पुण्यमावद।। यजुः- ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु विश्श्वाभूतानिजातवेदः पुनीहिमा॥19.39।। ब्राह्मणम् ॐ सवः कामयेतमहत्प्राप्नुयामित्युदगयनऽआर्पूर्यमाणपक्षे पुण्याहेद्वादशामुपसद्व्रतीभूत्वौदुवरेक सेचमसे-वासर्वौषधम्फलानीतिसम्भृत्यपरिसमुह्यपरिलिप्याग्निमुपसमाधायावृक्षाज्य संस्कृत्यपुसानक्षत्रेणमन्थःसन्नीयजुहोति॥1॥ पृथिव्यामुद्भृतायां तु यत्कल्याणं पुरा कृतम्। ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः ॥2॥ भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ..... कर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रवन्तु ॥ ॐअस्तु कल्याणम् ।। एवं त्रिः। ऋक् - ॐअपाः सोमपस्तमिन्द्र प्रयाहिकल्याणीर्जायासुरणं गहते॥ यत्रारथस्य वृहुतोनिधानविमोचनं वाजिनोदक्षिणावत्।। यजुः- ॐ यथेमांव्वाचङ्कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याब्भ्याꣳ शूद्राय चार्य्या च स्वाय चारणाय च। प्रियो देवानान्दक्षिणायैदातुरिह भूयासमयम्मे कामः समृध्यतामुपमादो नमतु।।26.2।। ब्राह्मणम्- ॐअथाध्वर्यो प्रतिगरोरात्सु रिमेय जपानाभद्रमेभ्यो यजमानेभ्यो भूदिति कल्याणमेवैतन्मानुष्यैर्व्वाचोवदति॥2॥ सागरस्य यथा वृद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता। सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः ॥3॥ भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ..... कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु। ॐ कर्म ऋद्धयताम्। एवं त्रिः। ऋक् - ॐ ऋद्धयामस्तो- मसनुयामत्राजमा नोमन्त्र सरथे होपयातम्॥ यशोनपक्कं वधु गोष्वंतरा भूतां- शोऽअश्विनोःकार्ममाः॥ यजुः- ॐ

स॒त्रस्य॒ऽऋद्धि॒र्द्धरस्यग॑न्न्म॒ज्ज्योति॒रमृता॑ऽअभूम। दि॒वम्पृथि॒व्व्याऽअद्ध्यारुहा॒माविदा॒मदे॒वान्त्स्व॒ज्ज्योति॑÷॥ 8.52॥ ब्राह्मणम्- ॐतऽउत्तरस्यहविर्द्धानस्य जघन्यायाङ्क वर्षा सामाभिगायन्तिसत्रस्यऽऋद्धिरितिराद्धिमेवैत॒दभ्युत्तिष्ठन्त्युत्तरवेदेर्वोतराया श्रोणावित्तरंतुक्रतूत्तरम् ॥3॥ स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा। विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्ति ब्रुवन्तु नः॥4॥ भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य .... कर्मणः स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।। ॐ आयुष्मते स्वस्ति॥ एवं त्रिः॥ ऋक् ॐ स्वस्तिरिद्धिप्रपयेश्रेष्ठारेक्णस्वत्याभिवाममेति॥ सानोऽअवासोऽअरणे निपातुस्वावेशावतुदेवगोपा।।यजुः- स्व॒स्ति न॒ऽइन्द्रो॑ वृद्धश्र्श्र॑वाः स्व॒स्ति न॑÷ पू॒षा वि॒श्र्श्ववे॑दाः।स्व॒स्ति न॒स्तार्क्ष्यो॒ऽअरि॑ष्टनेमिः स्व॒स्ति नो॒ बृह॒स्पति॑र्द्दधातु॥25.19॥ बाह्मणम् ॐ गातुञ्यज्ञायगातुञ्यज्ञपतयऽइति गातुह्येषयज्ञायेच्छतिगातुञ्यज्ञपतयेयज्ञस्य स स्थान्देवी स्वस्तिरस्तु नः स्वस्तिर्मानुष्येभ्यऽइति स्वस्तिनोदेवत्रास्तु स्वस्तिर्मानुष्य त्रेत्येवै तदा होर्ध्वं जिगातु भेषजमित्यूर्ध्वोनोयञ्यज्ञोदेवलोकञ्यजत्वित्येवैतदाहशन्नोऽअस्तुद्विप्रदेशञ्चतुषपदऽइत्येतावद्वाऽइद सर्वञ्यावद्विपाच्चैवचतुष्पाञ्च तस्माऽएवैतद्यज्ञस्य स्थांगत्वाशंकरोति तस्मादाहणन्नोऽअस्तुद्विपदेशं चतुष्पदे।।4।।

4। समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका। हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः ।5। भो ब्राह्मणाः! मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणाय आशीर्वचनमपेक्षमाणाय मया क्रियमाणस्य ....कर्मणः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुबन्तु॥ ॐ अस्तु श्रीः॥ एवं त्रिः॥ ऋक् ॐ श्रियेजातः श्रियऽआनिरिथाय॒श्रियं वयोजरितृभ्ययादधाति॥ श्रियं वसानाऽअमृतत्वमाय न्भवन्तिसुत्यासमि॒यामितद्रौ॥ यजुः- ॐ मन॑सः काम॒मार्कूतिं व्वा॒चः स॒त्यम॑शीय।प॒शूनाꣳ रू॒पमन्न॑स्य॒ रसो॒ यशः॒श्रीः श्र॑यता॒म्मयि॒ स्वाहा॑॥2॥ ब्राह्मणम्- ॐ तेनोह॒तत॒ऽईजेदक्ष पार्वतस्त॒ऽइमेप्येत॒र्हिदाक्षायणाराज्यमिवैव प्राप्ताराज्यमिहवैवप्राप्नोतियऽएवं विद्वाने तेनयज्ञेन यजतेतस्माद्वाऽएते नयजेत सवाऽएकैकऽएवानूचिना हुंपुरोडाशो भवत्येतेनोहास्यासपत्नानुपवाघाश्रीर्भवति ।।5।। कृतेऽस्मिन्पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागणपतिप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु। अस्तु परिपूर्णः। अथाभिषेकः॥ कर्तुर्वामतः पत्नीम् उपवेश्य पात्रपातितकलशोदकेन अविधुराश्चत्वारो ब्राह्मणा

दूर्वाम्रपल्लवैरुदङ्मुखास्तिष्ठन्तः सपत्नीकं यजमानमभिषिञ्चेयुः। तत्र मन्त्राः ॐ पर्यः पृथिव्याम्पयऽओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयो धाः॥ पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥18.36॥ ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः ॥ सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेभवत्सुरित् ॥34.11वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्ज्जनीस्थो वरुणस्यऽऋतसदन्यसि वरुणस्यऽ ऋतसदनमसि वरुणस्यऽऋतसदनमासीद॥4.36॥ ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा॥19.39॥ ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांम्पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्य्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि॥18.37॥ देवस्यत्वा। सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभि षिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्य्यायान्नाद्यायाभि षिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चामि॥20.3॥ ॐविश्वानिदेवसवितदुरिता निपरासुव॥ यद्भद्रन्तन्नऽआसुव॥ ॐ धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः। सचेतसो विश्वे देवा यज्ञम्प्रावन्तु नः शुभे॥18.76॥ ॐ त्वँ ष्यविष्ठ दाशुषो नॄः पाहि शृणुधी गिरः। रक्षा तोकमुतत्मना॥18.77॥ ॐ अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्रप्र दातारन्तारिषऽऊर्जन्नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे॥(11.83) ॐ **द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ॥ वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥36.17 ॥ ॐ यतोयतः समीहसे ततो नोऽअभयङ्कुरु ॥ शन्नः कुरु प्रजाभ्योभयन्नः पशुभ्यः ॥36.22॥सुशान्तिर्भवतु॥**

ब्राह्मणम्- ॐ पालाशं भवति॥ तेनब्राह्मणो भिषिञ्चतिब्रह्मवैपलाशोब्रह्मणैवैनमेतद्भिषिञ्चति। औदुम्बरम्भवति॥ तेनस्वोभिषिञ्चत्यन्नंवाऽऊर्गुदुम्बरऽऊर्वेस्वं यावद्वैपुरुषस्यस्वं भवतिनवैता-वदशनायतितेनोर्क स्वतस्मादौदुम्बरेणस्वोभषिञ्चति॥ नैष्यग्रोध पादं भवति। तेनस्वोभिषिञ्चत्यन्नंवाऽऊर्ग्वैस्वयं यावद्वैपुरुषस्यस्वं भवति नवैता वदनशनायतितेनोर्कस्वत स्मादौ दुंबरेणस्वोभिषिञ्चति। नैय्यग्रोधपाद भवति। तेनामित्रोराजन्योभिषिञ्चति पद्भिर्वैन्यग्रोध प्रतिष्ठितो

मित्रेणवैराजन्यः प्रतिष्ठितस्तस्मानैय्यग्रोधपादेन मित्रोराजन्योभिषिञ्चति। आश्वत्थं भवति। तेन वैश्योभिषिञ्चति स यदेवादोश्वत्थौतिष्ठतऽइन्द्रोमतऽउपा मन्त्रयते तस्मादाश्वत्थेनवैश्योमषिञ्चति। यद्देवकल्पाञ्जुहोतिप्राणा वैकुल्पाऽअमृत्तमुवै प्राणाऽअमृतेनैवैनमेतदभिषिञ्चति। सर्वेषां वाऽएषव्वेदानारसोयत्साम सर्वैषाम्सवैनमेतद्वेदानां रसेनाभिषिञ्चति। शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु।। स्वस्थाने उपविश्य हस्ते जलं गृहीत्वा- अभिषेककर्तृकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथोत्साहं दक्षिणां दास्ये तेन श्रीकर्माधीशः प्रीयताम्। ततः पुत्रवतीभिर्वृद्धसुवासिनीभिर्नीराजनं कार्यम्। तस्य मन्त्रः- ॐ अनाधृष्टा पुरस्त्तादग्नेराधिपत्त्यऽआयुर्म्मे दाः। पुत्रवतीदक्षिणतऽइन्द्रस्याऽधिपत्त्ये प्रजाम्मेदाः। सुषदा पश्चाद्देवस्य सवितुराधिपत्त्ये चक्क्षुर्म्मे दा ऽआश्रुतिरुत्तरतो धातुराधिपत्त्ये रायस्पोषम्मे दाः। व्विधृतिरुपरिष्टाद्बृहस्पतेराधिपत्त्यऽओजो मे दाव्विश्वाभ्यो मानाष्ट्राभ्यस्पाहि मनोरश्वासि॥37.12॥ अनेन पुण्याहवाचनेन कर्माङ्गदेवताः श्रीआदित्यादिनवग्रहाः प्रीयन्ताम् ।। इति पुण्याहवाचनप्रयोगः।

5.7 **मातृकापूजनप्रयोगः**- तत्रादौ वैश्वदेवं कुर्यात्। तदकरणे सङ्कल्पः- इदं वैश्वदेवहवनीय- द्रव्यं सदक्षिणाकमत्रावसरे वैश्वदेवाकरणजनितप्रत्यवायपरिहारार्थं करणजनितफलमाप्त्यर्थम् अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय विष्णुरूपाय तुभ्यमहं सम्प्रददे। अनेन वैश्वदेवकरणजनितफलसिद्धिरस्तु। ततो गोधूमादिधान्यपूरिते हरिद्रादिरञ्जिते मृन्मये अविघ्नाख्यकलशे मोदादिषड्विनायकानां प्रतिमाः कुङ्कुमादिना लिखित्वा आवाहयेत्- ॐमोदाय नमः मोदम् आवाहयामि। ॐप्रमोदाय नमः प्रमोदम् आवाहयामि। ॐ सुमुखाय नमः सुमुखम् आवाहयामि। ॐदुर्मुखाय नमः दुर्मुखम् आवाहयामि। ॐअविघ्नाय नमः अविघ्नम् आवाहयामि। ॐविघ्नकर्त्रे नमः विघ्नकर्तारम् आवाहयामि। **प्रतिष्ठापनम् ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टंयज्ञꣳसमिमन्दधातु। विश्वे देवासऽइह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ** ॥2.13॥ ॐ भूर्भुवः स्वः मोदादिषड्विनायकाः सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत। ॐमोदादिषत्त्रीनायकेभ्यो नमः इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य अनया पूजया मोदादिषड्विनायकाः प्रीयन्ताम्। इत्यविघ्नपूजनम्।

मण्डपमातृकास्थापनम्- निश्चितकोणे गर्तं खनेत्। गर्तसमीपे सभार्यो यजमानःपूर्वाभिमुख उपविश्य गोधूमनिर्मित गणपतिप्रतिमायां पूर्ववत् गणपतिं षोडशोपचारैः सम्पूजयेत्। ततो यजमानश्चतुर्षु कोणेषु मध्ये च गर्तं कुर्यात्। आचार्येण च दुर्वाशम्याम्रादिप्रशस्तवृक्षपत्राणां रक्तसूत्रेण पश्च वेष्टनानि कार्याणि। एषां मण्डपमातृसंज्ञा। ताश्च मण्डपमातृः मण्डपे स्थापयेत्। तासां मध्ये एकां मदनफलेन युक्तां कुर्यात्। ततस्तासां तैलहरिद्राकुङ्कुमादिसुगन्धद्रव्येणोद्वर्तनम्। ततो यजमानो गर्तेषु अद्भिरासेचनं कुर्यात् दध्ना च। ततस्ता आग्नेयादिचतुर्षु मण्डपकोणस्तम्भेषु क्रमेण चतस्रो मध्ये चेका एवं पश्च कृत्वा ततः स्थिरोभवेतिस्थिरीकरणम्॥ ॐ स्थिरो भव व्वीड्वङ्गऽआशुर्भव व्वाज्यर्व्वन्। पृथुर्भवसुषदस्त्वमग्नेः पुरीषवाहणः।।11.44।। तत्र शाखास्तम्. अग्निकोणे-ॐनन्दिन्यै नमः नन्दिनीमावाहयामि स्थापयामि॥1॥ नैर्ऋत्यकोणे नलिन्यै नमः नलिनीमावाहयामि॥2॥ वायव्यकोणे ॐ मैत्रायै नमः मैत्रामावाहयामि॥3॥ ईशानकोणे-ॐउगायै न... उमामा... ॥4॥ मध्ये पशुवर्धिन्यै नमः मनो जूतिर्ज्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं ग्यज्ञꣳ समिमन्दधातु। व्विश्वे देवासऽइह मादयन्तामो।।ꣳम्प्रतिष्ठ।।2.13।। ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दिन्यादिमण्डपमातृभ्यो नमः इत्यनेन मन्त्रेणावाहनादिषोडशोपचारैस्ताः पूजयेत्। अनया पूजया नन्दिन्यादिमण्डपमातरः प्रीयन्तां नमम।

गौर्यादिमातृणां पूजनम्- अग्निकोणे पीठोपरि रक्तवस्त्रं प्रसार्य तदुपरि गोधूमाक्षतपुञ्जेषु पूगीफलेषु वा सगणाधिपगौर्यादिचतुर्दशमातृणां दक्षिणोपक्रमाणाम् उदगपवर्गाणां प्रत्ययुपक्रमाणां प्रागपवर्गाणां वा स्थापनम्। ॐगणानान्त्वा.॥23.19 ॥ ॐगणेशाय नमः गणेशम् आवाहयामि स्थापयामि। भो गणपते इहागच्छ इह तिष्ठ॥1॥ ॐ आयङ्गौ पृश्निरक्क्रमीदसदन्नमातरम्पुरः॥ पितरञ्चप्रयन्त्स्वः॥1॥ ॐ भूर्भुवःस्वः गौर्यै नमः गौरीमावाहयामि स्थापयामि ।भो गौरि इहा गच्छ इह तिष्ठ ॥1॥ ॐ हिरण्यरूपाऽउषसो व्विरोकऽउभाविन्द्राऽउदिथः सूर्य्यश्च। आरोहतं व्वरुण मित्रꣳ गर्त्तन्त तश्चक्क्षाथामदितिन्दितिञ्च मित्रत्रोऽसि व्वरुणोऽसि॥10.16 ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः पद्मायै नमः पद्मामावाहयामि स्थापयामि। भो पद्म इहागच्छ इह तिष्ठ।2॥ ॐ कदाचन स्तरीरसिनेन्द्र सश्चसि दाशुषे। उपोपेन्नु मघवन्भूयऽइन्नु ते दानन्देवस्य पृच्यतऽआदित्त्येब्भ्यस्त्वा॥8.2॥ ॐभूर्भुवःस्वः शच्यै नमः शचीमावाहयामि स्थापयामि। भो शचि इहागच्छ इह तिष्ठ।।3।। ॐ मेधाम्मेव्वरुणोददातु-मेधामग्नि प्रजापतिः ॥ मेधामिन्द्रश्व्वायुश्च द्रश्चव्वायुश्चमेधान्धातादंदा तु मेस्वाहा ॥ 3॥ ॐ

भूर्भुवःस्वः मेधायै नमः मेधामावाहयामि स्थापयामि। भो मेधे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ 4 ॥ ॐ उपयामगृहीतोऽसि सावित्त्रोसिचनोधाश्चनोधाऽअसिचनोमयिधेहि। जिन्व यज्ञञ्जिन्व यज्ञपतिम्भगाय देवाय त्त्वा सवित्त्रे ॥8.7 ॥ ॐभूर्भुवःस्वः सावित्र्यै नमः सावित्रीम् आवाहयामि स्थापयामि। भो सावित्रि इहागच्छ इह तिष्ठ ॥5।। ॐ विज्यन्धनुः कपर्दिनो विशल्ल्यो बाणवाँ2।।ऽउत। अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥16.10॥ ॐभूर्भुवःस्वः विजयायै नमः विजयाम् आवाहयामि स्थापयामि। भो विजये इहागच्छ इह तिष्ठ ।।6॥ ॐ या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी। तया नस्तन्न्वा शन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि।।16.2।। ॐभूर्भुवःस्वः जयायै नमः जयाम् आवाहयामि स्थापयामि। भो जये इहागच्छ इह तिष्ठ॥7॥ ॐ देवानाम्भद्रा सुमतिर्ऋजूयतान्देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानाꣳ सक्ख्यमुपसेदिमा व्वयन्देवा नऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥25.15॥ ॐ भूर्भुवः स्वः देवसेनायै नमः देवसेनाम् आवाहयामि स्थापयामि। भो देवसेने इहागच्छ इह तिष्ठ॥8॥ ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यःस्वधायिभ्यःस्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः। अक्क्षन्पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धद्ध्वम्॥19.36॥ ॐभूर्भुवःस्वः स्वधायै भो स्वधायै नमः स्वधाम् आवाहयामि स्थापयामि। भो स्वधे इहागच्छ इह तिष्ठ॥9॥ ॐ स्वाहा यज्ञं मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्क्षात्स्वाहा द्यावापृथिवीब्भ्याꣳ स्वाहा व्वातादारभेस्वाहा ।।6.4।। ॐभूर्भुवःस्वः स्वहायै नमः स्वाहाम् आवाहयामि स्थापयामि। भो स्वाहे इहागच्छ इह तिष्ठ।।10।।

ॐ धृष्टिरस्यपाऽग्नेऽअग्निमामादञ्जहि निष्क्रव्व्यादꣳ सेधा देवयजं व्वह। ध्रुवमसि पृथिवीन्दृꣳह ब्रह्मवनि त्त्वाक्क्षत्रवनि सजातवन्न्युपदधामि ब्भ्रातृव्व्यस्यव्वधाय॥1.17॥ ॐभूर्भुवःस्वः धृत्यै नमः धृतिमावाहयापि स्थापयामि। भो धृते इहागच्छ इह तिष्ठ ॥11॥ ॐ त्वष्टा तुरीपोऽअद्भुतऽइन्द्राग्नी पुष्टिवर्धना। द्विपदाच्छन्दऽइन्द्रियमुक्क्षागौर्न्नव्वयोदधुः ॥21.20॥ ॐ भूर्भुवः स्वः पुष्ट्यै नमः पुष्टिमावाहयामि स्थापयामि। भो पुष्टे इहागच्छ इह तिष्ठ।।12॥ ॐ बृहस्पते.। ॐभूर्भुवः स्वः तुष्ट्यै नमः तुष्टिमावाहयामि स्थापयामि। भो तुष्टे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥13॥ ॐ अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन। ससस्त्यश्श्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम्॥23.18॥ ॐभूर्भुवः स्वः आत्मनः कुलदेवतायै नमः आत्मनः कुलदेवतामावाहयामि स्थापयामि। भो आत्मनः कुलदेवते इहागच्छ इइ तिष्ठ॥14॥ ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टं य्यज्ञꣳ समिमन्दधातु। व्विश्वे देवासऽइह

मा॑दयन्ता॒मो।। ३॑म्प्रति॑ष्ठ।।2.13।। ॐ भूर्भुवः स्वः सगणाधिपगौर्यादिमातरः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवत।। ॐ भूर्भुवः स्वः सगणाधिपगौर्यादिमातृभ्यो नमः इत्यनेन षोडशोपचारैः सम्पूजयेत्।

अथ श्र्यादिसप्तवसोर्द्धारापूजनम्- पात्रस्थेन विलीनेन सगुडेन घृतेन मातृणां संनिहितकुड्यलग्नाः दक्षिणायुदपवर्गाः पश्चिमादिप्रागपवर्गाः नातिनीचा न चोच्छ्रिताः सप्तवसोर्द्धाराः कर्तव्याः। ॐ व्वसोः॑ प॒वित्र॑मसि श॒तधा॑रं व्वसोः॑ प॒वित्र॑मसि स॒हस्र॑धारम्। दे॒वस्त्वा॑ सवि॒ता पु॑नातु व्वसोः॑ प॒वित्रे॑ण श॒तधा॑रेण सु॒प्वा काम॑धुक्षः॥1.3॥ इत्यनेन सप्तधाराः कृत्वा ततः शिष्टाचारात् उर्ध्वभागे गुडेनैकीकरणम् ॐकामधुक्ष। श्रीपूर्वसप्तमातृश्च घृतमातृस्तथैव च। गुडेन मेलायष्यामि ताः सर्वार्थप्रसाधिकाः॥ इत्यनेनैकीकृत्य कुङ्कुमादिना बिन्दुकरणेनालङ्कृत्य प्रतिधारायामेकैकदेवतामावाहयेत्। ॐमनर्स.।। ॐ भूर्भुवःस्वः श्रियै नमः श्रियम् आवाह्यामि॥1॥ ॐश्रीश्चते0॥ ॐलक्ष्म्यै नमः लक्ष्मीम् आवाहयामि ॥ 2 ।। ॐ इहरति.. ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः धृत्यै नमः धृतिम् आवाहयामि॥3॥ ॐमेधाम्ये0 ॥ॐमेधायै नमः मेथाम् आवाहयामि ॥4॥ ॐदेवीजोष्ट्री0।। ॐ भूर्भुवः स्वः पुष्टयै नमः पुष्टिमावाहयामि॥5॥ ॐव्रतेनदीक्षा0।। ॐ भूर्भुवःस्वः श्रद्धायै नमः श्रद्धाम् आवाह्यामि॥6॥ ॐदेवीस्तिस्रस्ति0॥ ॐ भूर्भुवःस्वः सरस्वत्यै नमः सरस्वतीम् आवाहयामि।।7॥ ॐ मनो॑ जू॒तिर्जु॑षता॒माज्य॑स्य॒ बृह॒स्पति॑र्य॒ज्ञमि॒मन्त॑नो॒त्त्वरि॑ष्टँ य्य॒ज्ञ॑ꣳ समि॒मन्द॑धातु। व्विश्वे॑ दे॒वास॑ऽइ॒ह मा॑दयन्ता॒मो।। ३॑म्प्रति॑ष्ठ।।2.13।॥ ॐ भूर्भुवःस्वः श्र्यादिसप्तवसोर्द्धाराः सुप्रतिष्ठिताः वरदा भवत। ॐ भूर्भुवःस्वः श्रयादिसप्तवसोर्द्धारादेवताभ्यो नमः इत्यनेन पोडशोपचारैः पूजयेत्।

प्रार्थना-यदङ्गन्त्वेन भो देव्यः पूजिता विधिमार्गतः। कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम्। इति मातृकापूजनप्रयोगः।

आयुष्यमन्त्रजपः- ॐ आ॒यु॒ष्यं व्वर्च॑स्य॑ꣳ रा॒यस्पोष॒मौद्भि॑द्दम्। इ॒दꣳ हिर॑ण्यं व्वर्च॑स्व॒ज्जैत्त्रा॒याविशतादु माम्॥34.50॥ न तद्रक्षा॑ꣳसि न पि॑शा॒चास्त॑रन्ति दे॒वाना॒मोजः॑ प्रथम॒जꣳ ह्ये॒तत्। यो बि॒भर्ति॑ दाक्षाय॒णꣳहिर॑ण्य॒ꣳ स दे॒वेषु॑ कृणुते दी॒र्घमायुः॑ स म॑नु॒ष्ष्येषु कृणुते दी॒र्घमायुः॑।।34.51।। यदाब॑ध्नन् दाक्षाय॒णाहिर॑ण्य॒ꣳश॒तानी॑कायसुमन॒स्यमा॑नाः॑।
तन्म॒ऽआब॑ध्नामि श॒तशा॑रदा॒यायु॑ष्म्माञ्ज॒रद॑ष्टि॒र्य्यथास॑म् ॥34.52॥

5.8 साङ्कल्पिक विधि से नान्दीश्राद्ध प्रयोग-

अथ यज्ञोपवीती प्राङ्मुखो दक्षिणं जानु पातयित्वा पात्रे उदङ्मुखान् प्राक्संस्थान् स्वयम् उदङ्मुखश्चेत् प्राङमुखान् उदक्संस्थान् वैश्वदेवस्थाने द्वौ सपत्नीकपितृपार्वणस्थाने द्वौ सपत्नीकमातामहपार्वणस्थाने द्वौ च एवं षट् कुशबटून् दूर्वाकाण्डानि वा संस्थाप्य क्षणदानं कुर्यात्। यवान्गृहीत्वा ॐ सत्यवसुसंज्ञकानां विश्वेषां देवानां नान्दीमुखानाम् अद्य कर्तव्यप्रधान सङ्कल्पोक्तकर्माङ्गसाङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे भवद्भ्यां क्षणः क्रियताम्। इति यवान्निक्षिप्य। ॐ तथा।। प्राप्नुतां भवन्तौ। प्राप्नवाव। यवान् गृहीत्वा गोत्राणां नान्दीमुखानां पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानाम् अद्य कर्तव्यप्रधानसंकल्पोक्तकर्माङ्गसाङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे भवद्भ्यां क्षणः क्रियताम्। इति यवान्निक्षिप्य। ॐ तथा। प्राप्नुतां भवन्तौ। प्राप्नवाव। यवान्गृहीत्वा द्वितीयगोत्राणां नान्दीमुखानां मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानाम् अद्य कर्तव्यप्रधान सङ्कल्पोक्त कर्माङ्गसाङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे भवद्भ्यां क्षणः क्रियताम्। इति यवान्निक्षिप्य।ॐतथा। प्राप्नुतां भवन्तौ।प्राप्मवाव। पाद्यदानम्-सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः इदं वः पार्थ पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः।

सङ्कल्पः- अद्य पूर्वोच्चारित0 शुभपुण्यतिथौ साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्धं करिष्ये । आसनदानम्- सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः इदं वः आसनम्। गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहमपितामहाः सपत्नीकाः इदं वः आसनम्। द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः इदं वः आसनम्।

गन्धादिदानम्- सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः इदं वः आसनम्। गोत्राः गन्धाद्यर्चनं यथाविभागं स्वाहा नमः। गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रापतामहाः सपत्नीकाः इदं वो गन्धाद्यर्चनं यथाविभागं स्वाहा नमः ॥ द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्ध प्रमातामहाः सपत्नीकाः इदं वो गन्धाद्यर्चनं यथा- विभागं स्वाहा नमः।

भोजननिष्क्रयद्रव्यदानम्- सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाःनान्दीमुखाः युग्मब्राह्मणभोजन पर्याप्तामनिष्क्रयी भूतं किञ्चिद्धिरण्यं दत्तम् अमृतरूपेण वः स्वाहा नमः। गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहाः सपत्नीकाः युग्मब्राह्मणभोजन पर्याप्तामनिष्क्रयीभूतं किञ्चिद्धिरण्यं दत्तम् अमृतरूपेण वः स्वाहा नमः।

द्वितीयगोत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः युग्मब्राह्मण भोजनपर्याप्तामनिष्क्रयीभूतं किञ्चिद्धिरण्यं दत्तम् अमृतरूपेण वः स्वाहा नमः।

सक्षीरयवमुदकदानम्-सत्यवसुसंज्ञकाः विश्वेदेवाः नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। गोत्राः नान्दीमुखाः पितृपितामहमपितामहाः सपत्नीकाः प्रीयन्ताम्। द्वितीयगौत्राः नान्दीमुखाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः प्रीयन्ताम्। **आशीर्ग्रहणम्**-अघोराः पितरः सन्तु। सन्त्वघोराः पितरः। गोत्रं नो वर्धताम्। वर्धतां वो गोत्रम्। दातारो नोऽभिवर्द्धन्ताम्। अभिवर्द्धन्तां वा दातारः। वेदाश्च नोऽभिवर्द्धन्ताम्। अभिवर्द्धन्तां वोवेदाः। सन्ततिर्नोऽभिवर्द्धताम्। अभिवर्द्धतां वः सन्ततिः। श्रद्धा च नो मा व्यगमत्। माव्यगमद्वः श्रद्धा। बहुदेयं च नोऽस्तु। अस्तु वो बहुदेयम्। अन्नं च नो बहु भवेत्। भवतु वो बह्वन्नम्। अतिथींश्च लभेयहि। अतिथींश्च लभध्वम्। याचितारश्च नः सन्तु। सन्तु वो याचितारः। एता आशिष सत्याः सन्तु। सन्त्वेताः सत्या आशिषः।

दक्षिणादानम्- सत्यवसुसंज्ञकेभ्योविश्वेभ्योदेवेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्यफलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे॥ गोत्रेभ्यःनान्दीमुखेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलमतिष्ठा सिद्धयर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे। द्वितीयगोत्रेभ्यः नान्दीमुखेभ्यः मातामहभमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यः कृतस्य नान्दीश्राद्धस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलक्रयवमूलनिष्क्रयीभूतां दक्षिणां दातुमहमुत्सृजे। नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम्। सुसम्पन्नम्।

विसर्जनम् ॐव्वाजिनोनोधनेषुविप्राऽअमृताऽऋतज्ञाः। अस्यमद्धः÷ पिबतमादयध्वन्तृप्ता यातपथिभिर्द्देवयानैः॥9.18॥

अनुव्रजनम्- ॐ आ मा व्वाजस्य प्रसवो जगम्यादेमे द्यावापृथिवी व्विश्वरूपे। आ मा गन्ताम्पितरा मातराचामासोमोऽअमृतत्त्वेनगम्यात्।।9.19॥ हस्ते जलमादाय-मयाऽऽचरितेऽऽस्मिन्साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनाच्छ्रीनान्दीमुखप्रसादाच्च सर्वः परिपूर्णोऽस्तु। अस्तु परिपूर्णः। अनेन साङ्कनल्पिकाविधिना नान्दीश्राद्धेन नान्दीमुखाः पितरः प्रीयन्ताम्।। इत्ति साङ्कल्पिकविधिना नान्दीश्राद्धप्रयोगः॥

इकाई-6 जातकर्म संस्कार विधि

जातकर्म संस्कार परिचय-

जातक के जन्म लेने पर जो वैदिक कर्म किए जाते है, उसे जातकर्म संस्कार कहते हैं। इस संस्कार से शिशु को गर्भ में स्थित दोषों से मुक्ति मिलती है और मेधानजन और आयुष्य कर्मों से आयु एवं बुद्धि का विकास होता है। प्रजापति की प्रसन्नता के लिए शिशु के जन्म होने पर पिता स्नान कर नालछेदन से पूर्व सुवर्णशला का से घी एवं मधु चटाकर पुरुष का जातकर्म करना चाहिए।

इस संस्कार के समय दान करने का निर्देश है-

ऋषभो दक्षिणा (आ. गृ.14 पृ. सं 38)

कुमारे जातं पुराऽन्यैशालम्भात्सर्पिर्मधुनि हिरण्यनि काषं हिर्ण्येन प्राशयेत्।

प्रतेदादभिः मधुनो घृतस्य वेदं सविता प्रसूतं मघोनाम।

आयुष्मान्गुप्तो देवताभिः शतं जीव, शरदो लोके अस्मिन्निति(आ.गृ सू. पृ.सं.39)

6.1 जातकर्म काल-

जाताशौचान्तर्मध्ये च जाते जातकर्मादि कुर्यात्।

मृताशौचमध्ये जाते तु तदाऽशौचान्ते वा कुर्यात्। (संस्कारप्रकाशः, पृष्ठसंख्या 187)

मृताशौचस्य मध्ये तु पुत्रजन्म यदा भवेत्।

आशौचापगमे कार्य जातकर्म यथाविधि ।।(संस्कारप्रकाशः, पृष्ठसंख्या 201)

ऊर्ध्वमसमालम्भनम् आदशरात्रात् (गो.गृ.सू.2.7)

शुद्धिकाल- जैमिनी के अनुसार शिशु के नाल को काटने पर सूतक प्रारम्भ हो जाता है –

यावान्न च्छिद्यते नालं तावान्नाप्नोति सूतकम्।

छिन्ने नाले ततः पश्चात्सूतकं तु विधीयते।। (सं.ग.पृ.444)

जातक के मुख के देखने के बाद जातकर्म संस्कार हेतु पिता स्नान करें-

जाते पुत्रे पितुः स्नानं सचेलन्तु विधीयते।

माता शुद्धेद्दशाहेन स्नानात् तु स्पर्शनं पितुः।। गो. गृ. सू. पृ.सं.410)

वशिष्ठ - पितृ ऋण मुक्ति-

जातमात्रकुमारस्य मुखमस्यावलोकयेत्।

पिता ऋणाद्विमुच्येत पुत्रस्य मुखदर्शनात्।। (सं.ग.पृ.436)

व्यास के अनुसार रात्रि कर्म-

रात्रौ स्नानं न कुर्वीत दानं चैव विशेषतः।

नैमित्तिकं तु कर्तव्यं स्नानं दानं च रात्रिषु।।

पुत्रजन्मनि यात्रायां शर्वर्यां दत्तमक्षयम्।।(सं.ग.पृ.437)

आश्वलायन ने स्नान के पश्चात् नादीश्राद्ध का निर्देश दिया है-

जातं कुमारं तं दृष्ट्वा स्नात्वाऽऽनीय गुरून्पिता।

नान्दीश्राद्धावसाने तु जातकर्म समाचरेत्।।(सं.ग.पृ.437)

वेदों में प्रार्थना गई है कि जिस प्रकार हवा से एक लघु सरोबर सभी ओर से हिलने लगता है, इसी प्रकार से गर्भगत बालक क्रिया करने लगे और इसी प्रकार वह दश मास में पूर्ण होकर बाहर निकल आए जिस प्रकार वायुवेग से चलती है, जैसे 'वन' स्वयं वायु की गति हिलने लगते है और समुद्र में हिलोरे आने लगती है उसी प्रकार हे दश मास में परिपक्व होने वाले गर्भ! जेर के साथ नीचे आओ। गर्भ में अपान का बल, जल एवं बालक होते हैं उनके तीन उपमान हैं समुद्र, वन और वात अर्थात् जिस तरह हवा से समुद्र हिलते है, वैसे ही उसी प्रकार शरीर की अपान वायु गर्भस्थ बालक को वैसे ही दस मास में तेरा गर्भ हिले और शिशु बाहर आए। यथा-

यथा वातः पुष्करिणीं समिङ्गयति सर्वतः।

एवा ते गर्भ एजतु निरैतु दशमास्यः॥

यथा वातो यथा वनं यथा समुद्र एजति।

एवा त्वं दशमास्य सहावेहि जरायुणा॥ ऋग्वेद.5.78.7,8

इस प्रकार इसमें मेधाजनन, आयुष्य, बल एवं नालच्छेदन प्रमुख हैं। मेधाजनन संस्कार बालक को मेधावी बनता है। अतः सुवर्णादि के पात्र में मधु व घृत को मिलाकर सुवर्ण की शलाका से शिशु को चटाना चाहिए तत्पश्चाद् शिशु का पिता आयुष्य कर्म सम्पादित कर शिशु की दीर्घायु की कामना करता है। इससे शिशु के बल और स्वास्थ्य तथा उसकी माता के कल्याण की प्रार्थान करें। शिशु के जन्म स्थल की भी पूजा करनी चाहिए। शिशु को माता का दुग्धपान कराना चाहिए। सूतिका के गृहद्वार या चौक में

जल से भरे घड़े से एवं अग्नि से अनिष्ट की शान्ति के लिए प्रार्थना कर पारिवारिक नियमों के तहत शिशु के जन्म के छटवें दिन अधिष्ठात्री देवी (शिशु की रक्षा करनेवाली) षष्ठी कर्म का आयोजन करना चाहिए ऐसा देवीभागवत एवं ब्रह्मवैवर्त पुराण में वर्णन है।

जातकर्म संस्कार का मुहूर्त- शिशु के जन्म के समय यदि किसी कारण जातकर्म संस्कार नहीं हुआ हो तो पश्चात् इस काल में जातकर्म संस्कार करें।

तज्जातकर्मादि शिशोविधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि ।

एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात् ।। मु.चि.सं. प्र. 11

पर्व अर्थात् कृष्णपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पूर्णिमा, सूर्य- संक्रान्ति तथा चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी को त्यागकर अन्य तिथियों में, व्यतीपातादि दोष रहित शुभग्रहों के दिन में, जन्मकाल से ग्यारहवें या बारहवें दिन में; मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, घनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र में जातकर्म संस्कार करना चाहिए।

संस्कार प्रयोग

कर्म	अग्निनाम	कर्म	अग्निनाम
गर्भाधान	मारुत	अन्नप्राशन	शुचि
पुंसवन	पवमान	चूडाकरण	सभ्य
सीमन्तोन्नयन	मंगल	उपनयन	समुद्भव
जातकर्म	प्रबल	गोदान	सूर्य
नामकरण	पार्थिव	विवाह	योजक

6.2 अनादिष्टप्रायश्चित्तहोम- बटुना सह यजमानो मङ्गलस्नातः आचम्य प्राणानायम्य॥ सुसुखश्चेत्यादि... पठित्वा हस्ते जलमादाय अद्येत्यादि... अनुकवारान्वितायां मम अस्य कुमारस्य जातकर्मकर्मनिष्क्रमणान्नप्राशनचौलान्तानां संस्काराणां स्वस्वकाले अकरणजनितप्रत्यवायपरिहारार्थम् अनादिष्टं प्रायश्चित्तं होष्ये ॥

यजमानः एवं संकल्प्य (ग्रहयज्ञस्थण्डिलात् दक्षिणे) द्वादशागुलपरिमिते प्रादेशमात्रे ना स्थण्डिले पञ्चभूसंस्कारपूर्वकम् अग्निं संस्थापयेत्। यथा- सुवासिन्याः आनीतमग्निमाग्नेय्यां स्थापयित्वा ततः ॐ

हुंफट् इति क्रव्यादांशं नैर्ऋत्यां परित्यज्य। विट्नामानमग्निम् आवाहयामि स्थापयामि।। इति अग्नि संस्थाप्य ।। आज्यं निरूप्य ॥ अधिश्रित्य ।। स्त्रुवं प्रतप्य ।। सम्मृज्य उद्वास्य उत्पूय अवेक्ष्य जुहुयात् ।।ॐभूः स्वाहा इदमग्नये न मम ॥1॥ ॐभुवः स्वाहा इदं वायवे न मम ॥ 2 ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय न मम ॥3॥ ॐभूर्भुवःस्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमम॥4॥ ॐत्वन्नोऽअग्ने **वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः। यजिष्ठोवह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांॅसि प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा**।।21.3॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ॥5॥ ॐ सत्त्वन्नोऽअग्ने**वमोभवोती नेदिष्ठोऽअस्याऽउषसोव्युष्टौ। अवयक्ष्वनोवरुणः रराणोवीहि मृडीकः सुहवोनऽएधि** ।।21.4। इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम ।।6॥ ॐ अयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपाश्चसत्यमित्वमयाऽअसि। अयानोयज्ञं वहास्ययानोधेहिभेषज.स्वाहा॥ इदमग्नये अयसे न मम ॥ 7 ॥ ॐयेते शतं वरुण वे सहसंयज्ञियाः पाशावितितामहान्तः।। तेभिर्नोऽश्रद्यसवितोतविष्णुर्विश्वेमुञ्चन्तुमरुतः स्वर्काःस्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भयः स्वर्केभ्यश्च न मम ॥ 8 ॥ **ॐ उदुत्तमम्वरुण पाशमस्म्मदवाधमम् विमध्यमॅंश्रथाय। अथावयमादित्यव्रतेतवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा** ॥12.12॥ इदं वरुणायादित्यायादितये च न मम ।।9।। अनेन अनादिष्टप्रायश्चित्तहोमकृतेन मम अस्य कुमारस्य जातकर्मादि चौलान्तानां संस्काराणां कालातिक्रमदोषनिवृत्तिरस्तु ॥ जलमादाय-अधेत्यादि0 मम अस्य कुमारस्य जातकर्मस्वकालातिक्रमदोषपरिहारार्थं पादकृच्छ्ररूपप्रायश्चित्तं रजतप्रत्याम्नायद्वारा अहमाचरिष्ये।। अनेन अनादिष्टप्रायश्चित्तकृतेन मम अस्य कुमारस्य जातकर्मस्वकालातिक्रम- दोषनिवृत्तिपूर्वकजातकर्मकरणाधिकारसिद्धिरस्तु।। इति अनादिष्टप्रायचित्तहोमः।

6.3 **जातकर्मसंस्कारविधि-** यजमान आचम्य प्राणानायम्य अद्येत्यादि... मम अस्य कुमारस्य गर्भाम्बुपानजनितसकलदोषनिर्बहणायुर्मेधाभिवृद्धिबीजगर्भसमुद्भवैनोनिबर्हणद्वा-रा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं जातकर्माख्यं कर्म करिष्ये।। ॐअद्येत्यादि..॥ मम अस्य कुमारस्य जातकर्मसंस्काराङ्गनिमित्तं प्राक् पञ्चोपचारैः गणपतिपूजनम् अहं करिष्ये।। ॐ गणानान्त्वा..। ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धिबुद्धिसहितमहागण-पतये नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि॥ इति सम्पूजयेत्। अनया पूजया सिद्धिबुद्धिसहितमहागणपतिः प्रीयताम्।। ततः अनामिकया सुवर्णान्तर्हितया कांस्यपात्रे मधुघृतं

एकीकृत्य वा केवलं कुमारं प्राशयति।। ॐ भूस्त्वयि दधामि ।।ॐभूवस्त्वयि दधामि ।। ॐस्वस्त्वयि दधामि॥ ॐभूर्भुवःस्वः सर्वं त्वयि दधामि॥ इति मन्त्रेण सकृत्प्राशयति वा प्रणवमन्त्रेण प्राशयति ॥ इति मेधांजननम् ॥ अथायुष्यकरणं करोति तद्यथा।। कुमारस्य नाभिसमीपे दक्षिणकर्णसमीपे वा अग्निरायुष्मान्नित्यादिमन्त्रान् जपति। यथा-ॐ अग्निरायुष्मान्स वनस्पतिभिरायुष्मांस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि॥ ॐ सोमऽआयुष्मान्सऽओषधिभिरायुष्मास्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि॥ ॐ ब्रह्मायुष्मत्तद्ब्रह्मणैरायुष्मत्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि। ॐदेवाऽआयुष्मन्तस्ते मृतेनायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि।। ॐऋषयऽआयुष्मन्तस्ते व्रतैरायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि।। ॐपितरऽआयुष्मन्तस्ते स्वधाभिरायुष्मॉंन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि।। ॐ यज्ञऽआयुष्यान्स दक्षिणाभिरायुष्मॉंस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि।। ॐ समुद्रऽआयुष्मान्स स्रवन्तीभिरायुष्मॉंस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि।। (इत्येतावत्पर्यन्तम् अग्निरायुष्मानित्याद्यारभ्य त्रिर्जपति॥ तत् त्र्यायुषमिति च त्रिर्जपेत।। ॐत्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यप पश्यत्र्यायुषम्।।यद्देवेषुत्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम्॥ इति **त्रिः**॥3.62॥ पिता यदि कामयेदयं कुमारः सर्वमायुरियादिति तदा कुमारं दिवस्परीत्येकादशभिः ऋग्भिरभिमृशेत् ।। ॐ दिवस्प्परि प्प्रथमञ्जज्ञेऽअग्ग्नेरस्म्मद् द्वितीयम्परि जातवेदाः। तृतीयमप्प्सु नृमणाऽअजस्रमिन्धानऽएनञ्जरते स्वाधीः॥1॥12.18॥ विद्द्मा तेऽअग्ने त्त्रेधा त्त्रयाणि विद्द्मा ते धाम विभृता पुरुत्त्रा। विद्द्मा ते नाम परमङ्गुहा यद्द्विद्द्मा तमुत्सँ यतऽआजगन्थ॥12.19॥ समुद्रे त्त्वा नृमणाऽअप्प्स्वन्तर्नृचक्षाऽईधे दिवोऽअग्ग्नऽऊधन्। तृतीये त्त्वा रजसितस्त्थिवाᳬसमपामुपस्त्थे महिषाऽअवर्द्धन्॥12.20॥ अक्रन्ददग्ग्निस्त्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन्। सद्यो जज्ञानो विहीमिद्धोऽअक्ख्यदा रोदसी भानुना भात्त्यन्तः।।12.21॥॥ श्रीणामुदारो धरुणो रयीणाम्मनीषाणाम्प्रार्पणः सोमगोपाः। व्वसुः सूनुः सहसोऽअप्प्सु राजा विभात्त्यग्ग्रऽउषसामिधानः॥12.22॥ विश्श्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्ब्भऽआ रोदसीऽअपृणाज्जायमानः। व्वीडुञ्चिदद्रिमभिनत्परायञ्जना यदग्निमयजन्त पञ्च॥12.23॥ उशिक्क पावकोऽअरतिः सुमेधा मर्त्तेष्ष्वग्निरमृतोनिधायि। इयर्त्तिधूममरुषम्भरिब्भ्रदुच्छुक्रेण शोचिषाद्यामिनक्षन्॥12.24॥ दृशानो रुक्मऽउर्व्व्या व्व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्श्रियेरुचानः। अग्निरमृतोऽअभवद्वयोभिर्य्यदेनन्द्यौरजनयत्त् सुरेताः॥12.25॥ यस्तेऽअद्यकृणवद्भद्रशोचेऽपूपन्देव घृतवन्तमग्ने। प्रतन्नयप्प्रतरंव्वस्योऽअच्छाभि

सुम्नन्देवभक्तँ व्यविष्ठ॥12.26॥ आ तम्भंजसौश्रवसेष्वंग्ग्र ऽउक्क्थऽउंक्क्थऽआभंज शस्यमाने। प्प्रियः सूर्य्ये प्प्रियोऽअग्ग्नाभंवात्त्युञ्जातेनंभिनदद्दुज्जनिंत्त्वैः॥12.27॥ त्वामंग्ग्ने यजंमानाऽअनुद्यून्विश्श्वा वसुं दधिरेव्वार्य्याणि। त्वयां सह द्रविंणमिच्छमांना व्व्रजङ्गोमंन्तमुशिजो विवंव्व्रुः ॥12.28॥ ततः कर्ता बालस्य पूर्वादिचतुसृषु दिक्षु चतुरो ब्राह्मणान् चैकं मध्ये नैर्ऋत्ये वाऽवस्थाप्य तान्प्रति इमयनुप्राणेत्यादि प्रैषं ब्रूयात्।। ततस्ते प्रेषिताः पूर्वादिक्रमेण कुमारं लक्ष्यीकृत्य प्राणेत्यादि ब्रूयुः एवं प्रेषानुप्रैषं सर्वत्र ।। यथा- इममनुप्राण। प्राण इति पूर्वः।। इममनुव्यान। व्यानेति दक्षिणः।। इममन्वपान। अपानेति अपरः॥ इममनुदान। उदानेत्युत्तरः।। इममनुसमान।। समानेति पञ्चमः उपरिष्टादवेक्षमाणो ब्रूयात्।। (अविद्यमानेषु विभेषु स्वयमेव पूर्वादिदिशं परिक्रम्य प्राणेत्यादि ब्रूयात्।। नात्र प्रैषः।।) स बालो यस्मिन्भूभागे जातो भवति तमभिमन्त्रयते।। ॐ वेदृतेभूमिहृदयन्दिविचन्द्रमसिश्रितम्।। वेदाहन्त-न्मान्तद्विद्यात्पश्येमशरदः शतञ्जीवेमशरदः शतश्शृणुयामशरदः शतम्॥ अथैनं शिशुमभिसृशति।। ॐ अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्त्रुतम्भव। आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम्।। हस्ते जलमादायकृतस्य जातकर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थ स्मृत्युक्तान् दशसंख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये तेन श्रीकर्माङ्गदेवताः प्रीयन्ताम्।। लम्बोदरनम0।। यथाशक्त्या जातकर्मसंस्कार विधेः परिपूर्णताऽस्तु। अस्तु परिपूर्णता। इति जातकर्मसंस्कारप्रयोगः

6.5 षष्ठीपूजन प्रयोग

आचम्य प्राणानायम्य। हस्ते जलमादाय अद्येत्यादि.. अनयोः सूतिकाबालकयोः आरोग्याभिवृद्ध-यर्थ सकलारिष्टशान्तिद्वारा श्रीपरमेश्वप्रीत्यर्थं विघ्नेशस्य जन्मदायाः षष्ठीदेव्या जीवन्तिकायाश्च यथा-प्राप्तोपचारैः पूजनं करिष्ये॥ एतत्प्रतिमाः (कङ्कुमादिना कुड्ये लेखनीयाः) पीठादौ वाऽक्षतपुञ्जेषु पूगीफलेषु विनिवेश्याः।। हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा।। विघ्नेश इहागच्छ इहतिष्ठ विघ्नेशाय नमः विघ्नेशमावाह्यामि स्थापयामि॥1॥ जन्मदे इहा... जन्मदायै... जन्मदामावा.. स्थापयामि॥2॥ षष्ठीदेवि इहा....षष्ठीदेव्यै... पष्ठीदेवीमावा.. स्थापयामि॥ 3॥ जीवन्तिके इहा... जीवन्तिकायै... जीवन्तिकामावा... स्थापयामि॥4।। ॐमनोजूति... मन्त्रेण प्रतिष्ठां कृत्वा "विश्नेशजन्मदा षष्ठीदेवीजीवन्तिकाभ्यो नमः" इति मूलमन्त्रेण षोडशोपचारैः पूजनं कुर्यात्।। प्रार्थना-षष्ठीदेवि नमस्तुभ्यं सूतिकागृहशालिनि । पूजिता परमा भक्त्या दीर्घमायुः प्रयच्छ मे॥1॥ जननी जन्मसौख्यानां बर्धिनी

धनसम्पदाम् । साधिनी सर्वभूतानां जन्मदे त्वां नता वयम्॥2॥ गौरीपुत्रो यथा स्कन्दः शिशुत्वे रक्षितः पुरा। तथा ममाप्यसुं बालं षष्ठिके रक्ष ते नमः ॥3॥ सर्वविघ्नानपाकृत्य सर्वसौख्यप्रदायिनि।। जीवन्तिके जगन्मातः पाहि नः परमेश्वरि॥4॥ इति सम्प्रार्थ्य॥ अनया पूजया विघ्नेशजन्मदाषष्ठीदेवीजीवन्तिकाः प्रीयन्ताम्।। ततः सुतिकागृहे सोपस्करं बलिं दद्यात्। बलिद्रव्याय नमः गन्धपुष्पं समर्पयामि। (जलं गृहीत्वा क्षेत्रस्याधिपते देवि सर्वारिष्ट-विनाशिनि । बलिं गृहाण मे रक्ष क्षेत्रं सूतिं च बालकम्॥1॥ इमं सोपस्करबलिं क्षेत्राधिपत्यै देव्यै नमः समर्पयामि। ततः " खड्गदेवताः" अक्षतपुञ्जेषु आवाहयेत्। तद्यथा- राकायै.. राकामावा... ॥1॥ अनुमत्यै... अनुमतिमावा...॥2॥ सिनीवाल्यै सिनीवालीमावा...॥3॥ कुह्वै.. कुहूमावा.. ॥4॥ वातघ्न्यै... वातघ्नीमावा....॥5॥ इत्यावाच्च प्रतिष्ठां कृत्वा। "राकाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः" इति मूलमन्त्रेण पञ्चोपचारैः सम्पूज्य। जलमादाय। अनेन पञ्चोपचारैः पूजनाख्येन कर्मणा राकाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्ताम्। ततो बहिरागत्य द्वारस्योभयतः कज्जलेन द्वे द्वे मातरौ लिखेत्।। तासां नामानि। धिषणा वृद्धिमाता व तथा गौरी च पूतना। आयुर्दात्र्यो भवन्त्वेता अद्य बालस्य मे शिवाः।। "धिषणादिचतस्रृमातृभ्यो नमः" इति मन्त्रेण पञ्चोपचारैः सम्पूज्य। हस्तेजलमादाय। अनया पूजया धिषणादिचतस्रृमातरः प्रीयन्ताम्॥ कृतस्य षष्ठीपूजनकर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थं यथाशक्ति सुवासिनीः भोजयिष्ये। विप्रेभ्यश्च खाद्यताम्बूलदक्षिणादिकं दद्यात्। तेभ्य आशिषो गृह्णीयात्। दशमदिने षष्ठीदेवतादिविसर्जनम्॥ इति

इकाई-7 नामकरण संस्कार का परिचय

नामकरण संस्कार का परिचय- यजुर्वेद में नामकरण संस्कार की उपयोगिता के विषय में वर्णन करते हुए कहा गया है कि आप कौन है? आपका नाम क्या है? आप किस पिता के पुत्र हो?

को सि कतमोसि कस्यासि को नामासि।

यस्य ते नामामन्महि यन्त्वा सोमेनातीतृपाम । (यजुर्वेद 7.29)

नाम चास्मै दद्युः(आ.गृ.सू.4)

अतः नाम से ही व्यक्ति को कीर्ति मिलती है। अतः शिशु का नामकरण वैदिक विधि से अवश्य करना चाहिए यथा-

नामाखिलस्य व्यवहारहेतुः शुभावहं कर्मसु भाग्यहेतुः।

नाम्नैव कीर्तिं लभते मनुष्यस्ततः प्रशस्तं खलु नामकर्म ।।(संस्कारप्रकाश, पृष्ठसंख्या 241)

7.1 **नामकरण काल-** समाज में कार्यो और व्यवहार के लिए नाम की आवश्यकता होती ही है इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए नामकरण संस्कार सम्पन्न किया जाता है। अशौचकाल काल समाप्त होने पश्चात् अतः दसवें अथवा बारहवें ब्राह्मण का, सोलहवें दिन क्षत्रिय की, बीसवें दिन वैश्य का एवं 32 वें दिन अन्य वर्णों का नामकरण संस्कार करना चाहिए।

द्वादशे दशमे वापि जन्मतो दिवसे शुभम् ।

षोडशे विंशके चैव द्वात्रिंशे वर्णतः क्रमात् ।।(मुहूर्तविधान अ.10)

प्रसव दिन से दशवें दिन या ग्यारहवें दिन पवित्र तिथि को या पवित्र मुहुर्त में या ज्योतिष शास्त्र द्वारा निर्णीत नक्षत्र में रखना चाहिए।

नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वाऽपि कारयेत्।

पुण्ये तिथौ मुहूर्त्ते वा नक्षत्रे वा गुणान्विते।। (म.स्मृ. 2.30)

जननाद् दशरात्रे व्युष्टे शतरात्रे संवत्सरे वा नामधेयकरणम्। (गो. गृ.सू.2.8)

अथ यस्तत् करिष्यन् भवति पश्चादग्नेरुदग्गनेषु दर्भेषु प्राङुपविंशति।(गो. गृ.सू.2.9)

अथ माता शुचिता वसनेन कुमारमाच्छाद्य दक्षिणत उदञ्चं कर्तें प्रयच्छत्युदक् शिरसम्।।(आ. गृ.सू.2.10)

7.3 **चार प्रकार के नाम**(कुलदेवता नाम, मास नाम, नक्षत्रनाम, व्यावहारिक नाम),नामकरण कर्ता

अनुपृष्ठं परिक्रम्योत्तरत उपविशत्युदगग्रेष्वेषु दर्भेषु। (गो. गृ.सू.2.11)

अथ जुहोति प्रजापतये तिथये नक्षत्राय देवताया इति (गो. गृ.सू.2.12)

आहस्पत्यं मासं प्रविशावित्यन्ते च मन्त्रस्य घोषवदाद्यन्तरन्तरथं दीर्घाभिर्निष्ठानान्तं कृतं नाम दध्यात्। ।

ततश्च नाम कुर्वीत पितैव दशमेऽहनि।

देशपूर्व नराख्यं हि शर्मवर्मादि संयुक्तम्।।

अभिवादनीय नाम रखें- **एतद् तद्धितम् (गो.गृ.2.15)**

बालिकाओं के नाम अयुग्माक्षर तथा दकारान्त रखें- **जैसे** -वसुदा, यशोदा, नमृदा, सुभद्रा, सावित्री, गायत्री आदि। **अयुग्दान्तं स्त्रीणाम्(गो.गृ.2.16)**

उपनाम रखने का निर्देश-

अभिवादनीयं च समीक्षेत तन्मातापितरौ विधातामोपनयात्। (आश्वलायन पृ.सं.41)

मात्रेचैव प्रथमं नामधेयमाख्याय यथार्थम्। (गो.गृ.2.17)

जन्म से एक संवत्सर पर्यन्त जपादि का भी निर्देश है- **कुमारस्य मासि मासि संवत्सरे सांवत्सरिकेषु वा पर्वस्वग्नौ यजेत्। । (गो.गृ.2.19)**

कुलदेवता नाम- कुलदेवता से सम्बन्धित नाम शिष्टाचार हेतु एवं मास के अनुसार को अधोलिखित वर्णित चैत्रादि मासों के अनुसार नाम कृमशः रखना चाहिए जैसा महर्षि गर्ग ने कहा है यथा-

चैत्रादिमासनामानि वैकुण्ठोऽथ जनार्दनः।

उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवो हरिस्तथा।।

योगीशः पुण्डरीकाक्षः कृष्णोऽनन्तोऽच्युतस्तथा।

चक्रधारीति चैतानि क्रमादाहुर्मनीषिणः।। (सं.ग. पृ.सं.557)

मास नाम- मास के अनुसार पिता या कुल में जो भी ज्येष्ठ हो उसको नक्षत्र से सम्बन्धित अभिवादन के लिए नाम रखना चाहिए। जैसा कि बौधायन ने कहा है- **नाक्षत्रनामधेयेन द्वितीयं नामधेयं**.....।

महर्षि वशिष्ठ ने दो अथवा चार अक्षरों का नाम रखने की आज्ञा देते हैं लेकिन वे रेफान्त व लकारान्त नाम नहीं रखने का निर्देश दिया हैं यथा- **तद् द्वयक्षरं चतुरक्षर वा विवर्जयेद् अन्त्यलकाररेफम्।** आश्वलायन सूत्र में नाम की अक्षर संख्या के साथ अन्य गुणों का वर्णन है। दो या चार वर्णों का नाम रखें और नाम के प्रारम्भ में घोष वर्ण(तृतीय- चतुर्थ- पञ्चम वर्ण, समस्त स्वर और य र ल व ह आदि

वर्ण) मध्य में अन्तस्थ (य र ल व) वर्णों से एक वर्ण एवं अन्तिम अक्षर दीर्घ तथा पुत्रियों का आकारान्त, तद्धितान्त एवं विषम वर्णों वाला नाम रखें। यथा- **घोषवदाद्यन्तरन्तस्थमानि निष्ठानान्तं द्वयक्षरम्।(आ.गृ. सू. 5)** प्रसिद्धि हेतु दो अक्षरों का नाम रखना चाहिए। यथा- **द्वयक्षरं प्रतिष्ठाकामश्चतुरक्षरं ब्रह्मवर्चसकामः।(आ.गृ. सू. 7)**

बालिकाओं के नाम हेतु निर्देश है कि उनके नाम में अक्षरसंख्या विषम व आकारान्त तथा मंगलसूचक होना चाहिए।

चतुरक्षरं वा ।(आ.गृ. सू. 6) युग्मानि त्वेव पुंसाम् (आ.गृ. सू. 8)

भद्रदेव, रुद्रदत्त, देवदत्त, नागदेव, शिवदत्त, शिवराम, विष्णुशर्मा वसुशर्मा, जनार्दन, वेदघोष, जनार्दन, पुरन्दर आदि इस प्रकार चार वर्णों का नाम रखने का भी निर्देश है।

जातकर्म और नामकर्म का मुहूर्त्त

तज्जातकर्मादि शिशोविधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि।

एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात् ।। (मु.चि.सं. प्र. 11)

बृहस्पति-

द्वादशे दशमे वाऽपि जन्मतोऽपि त्रयोदशे।

षोडशे विंशतौ चैव द्वात्रिंशि वर्णतः क्रमात्।।

पर्व अर्थात् कृष्णपक्ष की अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पौर्णमासी, सूर्य- संक्रान्ति तथा चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी को त्यागकर अन्य तिथियों में, व्यतीपातादि दोषरहित शुभग्रहों के दिन में; जन्मकाल से ग्यारहवें वा बारहवें दिन में; मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, घनिष्ठा और शतभिष नक्षत्र में जातकर्म करें। यदि जन्मकाल में किसी कारणवश न किया गया हो। आदि पद से नामकर्म का भी ग्रहण है, अर्थात् इसी मुहूर्त में नामकर्म भी करना चाहिए।

7.4 **नामकर्म संस्कार विधि-** आचम्य प्राणानायम्य ।। सुमुखश्चेत्यादि... अद्येत्यादि... । मम अस्य कुमारस्य नामकरणस्य स्वकालाकृतजनितदोषप्रत्यवायपरिहारार्थं पादकृच्छ्रूपं प्रायश्चित्तं रजतप्रत्यान्नायद्वारा अहमाचरिष्ये ।। अनेन पादकृच्छ्रूपप्रायश्चित्तकृतेन मम अस्य कुमारस्य नामकरणस्वकालाति- क्रमदोषनिवृत्तिपूर्वकं नामकरणसंस्कारकरणे अधिकारसिद्धिरस्तु।

पुनर्जलमादाय-मम अस्य कुमारस्य नामकर्मणि अधिकारार्थं सूत्रोक्तान् त्रिभ्योऽधिकान् ब्राह्मणान् यथाकाले भोजयिष्ये। तेन ममास्य कुमारस्य नामकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु। अद्येत्यादि.... मम अस्य शिशोः बीजगर्भसमुद्भवैनो निवहणायुरभिवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं नामकरणसंस्काराख्यं कर्म करिष्ये । तदङ्गत्वेन गणपतेः " महागणपतये नमः" इति पञ्चोपचारैः पूजनमहं करिष्ये इति संकल्प्य गणेशस्य पञ्चोपचारैः पूजनं कुर्यात् वा ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम। आहमजानि गर्ब्भधमात्त्वमजासि गर्ब्भधम्।। 23.19।। महागणपतये नमः। इति मन्त्रेण सर्वोपचाराश गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति पूजनम्।। ततःशिष्टाचारात्कांस्यपात्रे तण्डुलान् पसार्य तदुपरि सुवर्णशलाकया गणपतिस्वकुलदेवताभक्तनाम लेख्यम्।। ततो मासनाम लेख्यम्।। ततो ज्योतिःशास्त्रोक्तावकहडाचक्रानुसारेण नक्षत्रनाम लेख्यम्।। ततो व्यवहारनाम लेख्यम्।। अद्येत्यादि... ममास्य शिशोः बह्वायुष्यप्राप्त्यर्थं नामदेवतापूजनमहं करिष्ये।। इति सङ्कल्प्य। मनोजूतिरिति मन्त्रेण नामदेवतायाः प्रतिष्ठा कार्या। **ॐमनो जूतिर्ज्जुषतामाज्ज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्त्वरिष्टंयज्ञ-ज्ञꣳसमिमन्दधातु। विश्वे देवासऽइह मादयन्तामोइम्प्रतिष्ठ**॥2.13॥ ततः ॐभूर्भुवः स्वः "नामदेवतायै नमः" इति नाममन्त्रेण आवाहनम् आसनं पाद्यम् अर्घ्यम् आचमनीयं स्नानं वां यज्ञोपवीतं गन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्यफलताम्बूलं हिरण्यदक्षिणां प्रदक्षिणां नमस्कारान्मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि इति ना पञ्चोपचारैः सम्पूजयेत्। अनया पूजया नामदेवता प्रीयतां न मम। ततः स्वदक्षिणतो मातुरुत्सङ्गस्थस्य शिशोदक्षिणकर्णे कथयति। हे कुमार! त्वं गणपतिभक्तोऽसि। सर्वान्ब्राह्मणान अभिवादय। अभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य। हे कुमार! त्वं कुलदेव्या भक्तोऽसि। सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय। अभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य। हे कुमार ! त्वं मास- नाम्ना अमुकशर्मासि। सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय। अभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य। हे कुमार! त्वं नक्षत्रनाम्ना अनुकशर्मासि। सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय। अभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य। हे कुमार! त्वं व्यवहारनाम्ना अम्मुकशर्मासि। सर्वान्ब्राह्मणान् अभिवादय। अभिवादयामि। आयुष्मान्भव सौम्य। **ॐ** ततो विप्राः व्वेदोऽसि येन त्त्वन्देव व्वेद देवेब्भ्यो व्वेदोऽभवस्तेन मह्यं वेदो भूयाꣳ। देवा गातुविदो गातुं व्वित्त्वा गातुमित। मनसस्पतऽइमं देव यज्ञꣳ स्वाहा व्वातेधाꣳ॥2.21।। मनोजूतिरिति मन्त्रेण प्रतिष्ठा कार्या।**ॐ मनो जूति...**।। एवं प्रतिष्ठानामयज्ञो यत्रैतेनयज्ञेन यजन्ते सर्वमेवप्रतिष्ठितं

भवति।। अनुकनाम्ना प्रतिष्ठितं भवतु। हे कुमार सर्वान्ब्राह्मणान अभिवादय। अभिवादयामि।। आयुष्मान्भव सौम्य। अथैनमभिमृशति। ॐ अश्मा भव परशुर्थव हिरण्यमस्तुतं भव। आत्मा वै पुत्रनामाऽस स जीव शरदः शतम्। कृतस्य नामकर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थं स्मृत्युक्तान्दशसङ्ख्याकान्ब्राह्मणान् यथाकाले यथासम्पन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये तेन कर्मांगदेवता भीयतां न मम। लम्बोदर नमस्तुभ्यम्... ॥ यथाशक्त्या नामकरणविधेः परिपूर्णताऽस्तु। अस्तु परिपूर्णता। इति नामकरणसंस्कारविधिः।

इकाई-8 निष्क्रमण संस्कार परिचय

निष्क्रमण संस्कार- निष्क्रमण का अर्थ है बाहर निकलना अर्थात् बालक को घर से निकालकर जहाँ की वायु शुद्ध हो वहाँ भ्रमण करवाना निष्क्रमण कहलाता है। निष्क्रमण के दिन शिशु को सूर्य के प्रथम दर्शन एवं रात्रि में चन्द्रमा के दर्शन कराएँ जाते हैं क्योंकि कि वेदों में ज्ञान-विज्ञान तथा मन के कारक माने गए है, इससे शिशु के जीवन में आनेवाले रोगों से लड़ने की प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि होकर शारीरिक उन्नति की कामना एवं सृष्टि अवलोकन करने का प्रथम शिक्षण देना है, इस विषय में वेद के दीर्घायु सूक्त में वर्णन है कि हे बालक! आप लिए यह द्यौ और पृथ्वीलोक, दुःख न देने वाले हो। कल्याणकारी एवं ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हों। सूर्य प्रकाश देने वाला हो, वायु तेरे हृदय को शान्त करने वाला हो और जल तेरे लिए सुन्दर स्वादवाला होकर बहता रहे। औषधियाँ कल्याणकारी हों और सूर्यचन्द्र दोनों तेरी रक्षा करें यथा- **शिवे ते स्तां द्यावापृथिवी असन्तापे अभिश्रियौ। शं ते सूर्य आ तपतु शं वातो वातु ते हृदे। शिवा अभि क्षरन्तु त्वापो दिव्याः पयस्वतीः।। शिवास्ते सन्त्वोषधय उत्त्वाहार्षमधरस्या उत्तरां पृथिवीमभि। तत्र त्वादित्यौ रक्षतां सूर्याचन्द्रमसावुभा।।** (अथर्ववेद 8.2.14-15) इस प्रकार शुभ नक्षत्र सुमुहूर्त में बाहर ले जाया जाता है। यहाँ निष्क्रमण का तात्पर्य है कि- शिशु को को पदार्थों से परिचित कर चन्द्रमा की शीत एवं सूर्य के ताप का अभ्यास प्रदान करना है। अतः यह संस्कार आवश्यक माना जाता है।

8.1 निष्क्रमण संस्कार का समय-

चतुर्थे मासि निष्क्रमणिका सूर्य भुदीक्षयति

जननाहा स्तृतीयो ज्यौत्स्नस्तस्य तृतीयाम्।।

ततस्तृतीये कर्त्तव्यं मासि सूर्यस्य दर्शनम्।

चतुर्थमासि कर्त्तव्यं शिशोश्चन्द्रस्य दर्शनम् ।।(संस्कारप्रकाशः, पृष्ठसंख्या 250)

जैसा कि मनुस्मृति में निष्क्रमण संस्कार का शिशु के जन्म से चौथे मास में करने का विधान है यथा- **चतुर्थे मासिक कर्तव्य शिशोनिष्क्रामण गृहात् ।। म.स्मृ.** 1.34। पारस्कर गृह्यसूत्र के अनुसार यह संस्कार जन्म के चौथे महीने में ही करना चाहिए। **यददश्चन्द्रसीति सकृद् युजषा द्विस्तृष्णीमुदसृज्य यथार्थम्।।(गो.गृ.सू.**1.7)

यम-

ततस्तृतीये कर्त्तव्यं मासि सूर्यस्य दर्शनम्।

चतुर्थे मासि कर्त्तव्यं शिशोश्चन्द्रस्य दर्शनम्।।

व्यास-

मैत्रे पुष्यपुनर्वसु प्रथमभे पौष्णेऽनुकूलं विधौ।

हस्ते चैव सुरेश्वरे च मृगर्भे तारासु शास्तासु च।।

कृयान्निष्क्रमणं शिशोर्बुधगुरौ शुक्रे विरक्ते तिथौ।

कन्याकुम्भतुलामृगारिभवने सौम्यग्रहालोकिते।।

8.2 निष्क्रमण संस्कार की विधि-

आचम्य प्राणानायस्य। मम अद्येतादि अमुकशर्मणः सुतस्य निष्क्रमणस्य स्वकालेऽकृतजनितदोषप्रत्यवाय परिहारार्थं पादकृच्छ्रूपप्रायश्चित्तं रजतमत्याम्नायद्वारा ऽक्ष्माचरिष्ये।। अनेन पादकृच्छ्रूपमायचित्तकृतेन मम अमुकशर्मणः सुतस्य निष्क्रमणकाले अकृतनिष्क्रमणसंस्कारजनितदोषनिवृत्तिपूर्वकनिष्क्रमणसंस्कारकर्मण्यधिकारसिद्धिरस्तु।।

अद्येत्यादि.... मम सुतस्य वीजगर्भ समुद्भवेनोनिवर्इणायुःश्रीवृद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरमीत्यर्थं गृहनिष्क्रमणसंस्काराख्यं कर्माहं करिष्ये॥ तदङ्गतया विहितं महागणपतेः पञ्चोपचारैः पूजनमहं करिष्ये ।। **ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्।। एह्येहि हेरम्ब महेशपुत्र! समस्तविघ्नौघविनाशदक्ष!**॥23.19॥ महागणपतये नमः।। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति पूजनम्।। ततः पिता मातृगृहीतमलंकृत कुमारं सदाद्यघोषं गृहाद्बहिरानीय सूर्यमुदीक्षयति।। **ॐ तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम्प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाꣳस्याम शरदः शतम्भूयश्च शरदः शतात्**॥36.24।।

भूर्भुवः स्वः सवित्रे सूर्यनारायणाय नमः सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि इति सूर्यं पूजयेत्॥

कृतस्य निष्क्रमणसाङ्गतासिद्धर्थं स्मृत्युक्तान् दशसंख्याकान् ब्राह्मणान् यथाकाले यथासम्पन्नेनान्नेनाहं भोजयिष्ये तेन कर्मांगदेवता प्रीयतां न मम।। लम्बोदरं नमस्तुभ्यम्॥ यथाशक्ति निष्क्रमणविधेः परिपूर्णताऽस्तु। अस्तु परिपूर्णता इति निष्क्रमणसंस्कारविधिः।

8.3 **देवालय दर्शन**- निष्क्रमण संस्कार की विधि एवं पूजन सम्पन्न होने के उपरान्त माता-पिता सर्वप्रथम बालक को देवालय में ले जाकर भगवान् के दर्शन करवाएँ और बैठकर देवी- देवताओं को प्रणाम करें तथा आशीर्वाद लें कि वे सदैव बालक की रक्षा करें।

इकाईः 9 पञ्चाङ्ग परिचय

प्रस्तावना- पञ्चाङ्ग हमें सम्पूर्ण वैदिक ज्ञान का ज्ञानवर्धन करता है। यही काल का दर्शक है। काल ही मानव के जीवन-मरण, इहलोक- परलोक, सुख- दुःख का नियामक है। अतः मनुष्य के जीवन को नियमित एवं सुव्यवस्थित मानक प्रदान करने के लिए आचार्यों ने पञ्चाङ्ग का निर्धारण किया, जिसमें समय के (पञ्च + अङ्ग) मानकों का वर्णन है यथा-वार, तिथि, नक्षत्र, करण इन पाँच अङ्गों का उपयोग मुख्य रूप से होता है। अर्थात् ज्योतिषशास्त्र का काल-विवेचनात्मक स्वरूप ही है। इससे से सोलह संस्कारों का मुहूर्त्त , त्यौहारों, और प्राकृतिक घटनाओं के काल का शुभाशुभ निर्णय किया जाता है। गणना के आधार पर इसकी की तीन धाराएँ हैं- पहली चन्द्र आधारित, दूसरी नक्षत्र और तीसरी सूर्य आधारित कैलेंडर पद्धति। विक्रम संवत के अनुसार एक वर्ष में 12 महीने होते हैं। प्रत्येक महीने में 15 -15 दिन के दो पक्ष होते हैं- शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष। इसी प्रकार प्रत्येक साल में दो अयन होते हैं। इन दो अयनों की राशियों में 27 नक्षत्र भ्रमण करते रहते हैं। 12 मास का एक वर्ष और 7 दिन का एक सप्ताह होता है। मास सूर्य व चन्द्र की गतिमान पर निर्भर है। भचक्र- भ्रमण में 12 राशियाँ के अनुसार बारह सौर मास हैं। जिस दिन सूर्य जिस राशि में प्रवेश करता है उसी दिन संक्रान्ति होती है। पूर्णिमा के दिन चन्द्र जिस नक्षत्र में होता है उसी आधार पर महीनों का नामकरण हुआ है। सौर वर्ष से चन्द्र वर्ष 11 दिन 3 घड़ी 48 पल छोटा है। अतः प्रत्येक तीसरी वर्ष में एक मास के काल का मान अधिक हो जाता है, उसे ही अधिक मास कहते हैं। इसी आधार पर एक साल को बारह में विभाजित किया गया है। महीने को चन्द्रमा की कलाओं के घटने और बढ़ने के आधार पर दो पक्षों शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष में विभाजित किया गया है। एक पक्ष में लगभग पन्द्रह दिन एवँ दो सप्ताह होते हैं।

दिन को चौबीस(24) घंटों के साथ-साथ आठ(8) पहरों में भी विभाजित किया गया है। एक प्रहर लगभग तीन घंटे का होता है। एक घंटे में लगभग दो घड़ी होती हैं, एक पल लगभग आधा मिनट के बराबर होता है और एक पल में चौबीस क्षण होते हैं। पहर के अनुसार देखा जाए तो चार पहर का दिन और चार पहर की रात होती है।

ये चान्द्रसौर प्रकृति के होते हैं। सभी हिन्दू पञ्चाङ्ग, कालगणना के एक समान सिद्धांतों और विधियों पर आधारित होते हैं किन्तु मासों के नाम, वर्ष का आरम्भ वर्षप्रतिपदा आदि की दृष्टि से अलग होते हैं।

एक सूर्यादय से दूसरे सूर्योदय तक का समय दिवस है, एक दिवस में एक दिन और एक रात होती हैं। दिवस के समय को 60 भागों में विभाजित किया गया है। इस प्रकार एक दिवस में 3600 पल होते हैं। एक दिवस में जब पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है तो उसी कारण सूर्य विपरीत दिशा में घूमता प्रतीत होता है। 3600 पलों में सूर्य एक चक्कर पूरा करता है और इस प्रकार 3600 पलों में 360 अंश 10 पल में सूर्य का जितना कोण बदलता है उसे 1 अंश कहते है। पंचांगों में मास चन्द्रमा के अनुसार होता है।

इसे भी समझे-

1 दिन में = 60 घटी यानि 24 घंटे का समय।1 घटी में = 24 मिनट।1 घटी = 60 पल यानि 60 पल 24 मिनट के बराबर है।1 पल में = 24 सैकेण्ड।1 पल = 60 विपल। 60 विपल में 24 सैकेण्ड। 1 विपल = 24 सैकेण्ड। 1 विपल में = 60 प्रतिविपल।1 पल में = 6 प्राण 1 प्राण = 4 सेकेण्ड आदि सूक्ष्म से सूक्ष्म अवयव अनन्त होते हैं।

चन्द्रमा की एक कला को तिथि माना जाता है जो उन्नीस घण्टे से 24 घण्टे की हो सकती है। अमावस्या के बाद प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियों को शुक्लपक्ष तथा पूर्णिमा से अमावस्या तक की तिथियों को कृष्ण पक्ष कहते हैं।

तिथि - सूर्य-चन्द्रमा के भ्रमण से जब अन्तर द्वादशांश (12) होता तब एक तिथि होती है। मास में शुक्लपक्ष व कृष्णपक्ष दो पक्ष होते हैं तथा प्रत्येक पक्ष में 15 तिथि होती हैं। एक राशि में 30 अंश होते हैं। इस प्रकार अमावस्या से अमावस्या या पूर्णिमा से पूर्णिमा तक चक्कर लगाने के लिए चन्द्रमा को 30x12=360 अंश गति करनी पडेगी। इन 360 अंशों को 30 तिथियों में विभाजित किया करने पर एक तिथि में प्रायः 12 अंश होते हैं। इस प्रकार सूर्य से चन्द्रमा को 12 अंश आगे जाने को ही एक तिथि कहते हैं। सूर्य एवं चन्द्र के अमावस्या में समागम के बाद दोनों ग्रहों में उत्तरोत्तर दूरी में अन्तर आता जाता है जब शीघ्र गतिमान चन्द्र 12 अंश तक जाता है, उस अन्तर को प्रतिपदा तिथि कहते हैं। इसी प्रकार 12-24 अंशान्तर को द्वितीया। एवमेव क्रमशः 12-12 अंशों की वृद्धि से तिथियों का वृद्धि क्रम भी चलता रहता है और 168 से अन्तोगत्वा, पूर्णिमा को सूर्य-चन्द्र में 180 अंश का अत्तर हो जाने पर पर पूर्ण चन्द्र दिखाई देता है और इसी के साथ शुक्ल पक्ष समाप्त हो जाता है। कृष्णपक्ष को

चन्द्र के 180 से अंश 12 अंश न्यून करने पर 168 पर प्रतिपदा तथा प्रतिदिन 12 अंश क्षीण होने से द्वितीयादि तिथियों का निर्माण होने लगता है। इस प्रकार क्रमशः चन्द्र अपनी गति करते हुए चन्द्र 0 अंश पर पहुँच कर अमावस्या तिथि के साथ कृष्णपक्ष की समाप्ति होती है।

तिथियों के नाम – पूर्णिमा प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और अमावस्या।

इसे भी समझे- क्षेत्रीय भाषा में तिथियों के नाम - परिवा, दूज, तीज, चौथ, पंचमी, छठ, सातें, आठें, नौमी, दसमी, ग्यारस, द्वाशि, तेरस, चौदस, पौर्णमासी और अमावस।

प्रतिपदादि तिथियों के स्वामी-

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गहो रविः ।

शिवो दुर्गान्तिको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ।।

अग्नि, ब्रह्मा, गौरी, गणेश, सर्प, कार्तिकेय, सूर्य, शिव, दुर्गा, यम, विश्वेदेव, विष्णु, कामदेव, शिव और चन्द्रमा ये क्रम से प्रतिपदादि तिथियों के स्वामी हैं।

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेति तिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः ।

सितेऽसिते शस्तसमाधमाः ः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ।।

तिथि संज्ञा- शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष की सभी तिथियों को नन्द्रा, भद्रा आदि संज्ञा दी गई हैं। यहाँ पूर्ण में पूर्णिमा और अमावस्या दोनों का ग्रहण करना चाहिए। ये तिथियाँ शुक्लपक्ष में पहले अशुभ,फिर मध्यम और फिर शुभ होती हैं। कृष्णपक्ष में पहले शुभ फिर मध्यम, अन्तिम अशुभ हैं।

तिथि संज्ञा संज्ञा बोधक चक्र-

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
प्रतिपदा,	द्वितीया	तृतीया	चतुर्थी	पंचमी
षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी
एकादशी	द्वादशी	त्रयोदशी	चतुर्दशी	पूर्णिमा /अमावस्या

नन्दादि तिथियों के कर्तव्य कर्म-

नन्दा तिथियाँ- कृषि, गृह सम्बन्धित कार्य, उत्सव, वस्त्र और शिल्प सम्बन्धित कार्य करना चाहिए।

भद्रा तिथियाँ – कला, वाहन सवारी, यात्रा, उपनयन, विवाह और आभूषण निर्माणादि कार्य करने चाहिए।

जया तिथियाँ – यात्रा, उत्सव, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, व्यापार, औषधि सेवन, सैन्य संगठन, सैनिक प्रशिक्षण, शस्त्र निर्माण और युद्ध सम्बन्धित कार्य करने चाहिए।

रिक्ता तिथियाँ – अग्नि सम्बन्धित कार्य, शल्यक्रिया, शस्त्र प्रयोग, शत्रु दमन और शत्रुओं को गिरफ्तार करना आदि कार्य करने चाहिए।

इसे भी समझे- यदि तिथि द्वितीय सूर्योदय को स्पर्श करे तो तिथि वृद्धि परन्तु तिथि आरम्भ होकर द्वितीय सूर्योदय से पहले ही समाप्त हो जाए तथा सूर्योदय से पहले दूसरी तिथि लग जाए तो तिथि क्षय समझे।

पूर्णा तिथियाँ – यज्ञोपवीत, विवाह, यात्रा, नृपाभिषेक तथा पौष्टिक कर्म करने चाहिए।

तिथि विचार- सूर्योदय के समय जो तिथि हो, उसमें ही पठन-पाठन, व्रतोपवास, देवकर्म, दान, प्रतिष्ठा, विवाहादि मांगलिक कार्य करने चाहिए। शरीर पर तैल- उवटन, जन्म-मरण तथा श्राद्ध में तात्कालिक तिथि ही ग्रहण करनी चाहिए।

कुछ स्थानों पर पूर्णिमा से मास समाप्त होता है तो कुछ स्थानों पर अमावस्या से। पूर्णिमा से समाप्त होने वाला मास पूर्णिमान्त कहलाता हैं और अमावस्या से समाप्त होने वाला मास अमावस्यान्त कहलाता है। अथः अधिकांश स्थानों पर पूर्णिमान्त मास का ही प्रचलन है।

इस प्रकार चन्द्र मास में 30 तिथियाँ होती हैं। जो शुक्लपक्ष में प्रतिपदा से पूर्णिमा पर्यन्त पन्द्रह तिथि हैं। कृष्णपक्ष में प्रतिपदा से अमावस्या तक पन्द्रह तिथि हैं।

प्रदोषकाल- चतुर्थी का प्रथम प्रहर, सप्तमी का प्रथम डेढ़ प्रहर एवं त्रयोदशी के प्रथम दो प्रहर का समय प्रदोष संज्ञक है जो शुभ कर्मों में ताज्य है।

ब्रह्मपुराण के अनुसार- षष्ठी एवं द्वादशी अर्द्ध रात्रि के एक घटी पूर्व तक हो तथा नौ घटी रात्रि तक तृतीया हो तो उसमे अध्ययन नहीं करना चाहिए।

निर्णयामृत के अनुसार - रात्रि में तीन प्रहर से पहले सप्तमी व त्रयोदशी हो तो प्रदोष होता है।

स्कन्दपुराण के अनुसार- सूर्यास्त के बाद छः घटी प्रदोषकाल होता है।

प्रतिपदादि तिथियों करने योग्य कार्य-

प्रतिपदा कृष्णपक्ष-गृहारम्भ, ग्रहप्रवेश, सीमन्तोनयन,चौलकर्म, उपनयन,यात्रा, विवाह, प्रतिष्ठा, शान्तिक तथा पौष्टिक कार्य शुभ हैं।

द्वितीया- उपनयन,वास्तुकर्म, प्रतिष्ठा, यात्रा,विवाह मुहूर्त, आभूषण खरीदना, संगीत विद्या के लिए, देश व राज्य सम्बन्धी कार्य तथा वित्तीय कार्य आदि कार्य करना शुभ माना गया है। इस तिथि में तेल लगाना वर्ज्य है।

तृतीया- सीमन्तोनयन, चूड़ाकर्म, अन्नप्राशन, उपनयन, सगीत विद्या, शिल्पकला, गृह प्रवेश, विवाह, यात्रा, राजकार्य आदि शुभ कार्य कार्य करने चाहिए।

चतुर्थी- बिजली कार्य, शत्रु सम्बन्धित कार्य, अग्नि सम्बन्धी कार्य, शस्त्रों का प्रयोग करना आदि क्रूर कार्य शुभ माने जाते है।

पञ्चमी-समस्त शुभ कार्य, ऋण देना वर्जित है एवं चरस्थरादि कार्य किए जा सकते हैं।

षष्ठी-युद्ध सम्बन्धित कार्य, शिल्प कार्य, वास्तुकर्म, गृहारम्भ, नवीन वस्त्र , तैलाभ्यंग, अभ्यंग, पितृकर्म, दातुन, आवागमन, काष्ठकर्म तथा पितृ कार्य कार्य वर्जित हैं।

सप्तमी- चूड़ाकर्म, अन्नप्राशन, उपनयन, विवाह, संगीत, आभूषणों का निर्माण और नवीन आभूषणों को धारण किया जा सकता है. यात्रा, वधुप्रवेश, गृहप्रवेश, राज्य संबंधी कार्य, वास्तुकर्म, संस्कार, आदि सभी शुभ तथा द्वितीया, तृतीया और पंचमी तिथियों में निर्दिष्ट कार्यों को करना चाहिए।

अष्टमी- युद्ध , अस्त्र-शस्त्र धारण, लेखन कार्य, वास्तुकार्य, शिल्प संबंधित कार्य, रत्नों से संबंधित कार्य, आमोद-प्रमोद तथा मनोरंजन सम्बन्धित कार्य करने चाहिए परन्तु इस दिन सात्त्विक भोजन ही करना चाहिए।

नवमी- आखेट, शस्त्र निर्माण, झगड़ा करना, जुआ खेलना, मद्यपान एवं निर्माण कार्य तथा चतुर्थी तिथि में किए जाने वाले कार्य भी किए जाने चाहिए।

क्षय-वृद्धि तिथि विचार-क्षय-वृद्धि तिथियों में किए गए कार्य निष्फल हो जाते हैं।

दशमी -समस्त राजकार्य ,हाथी, घोड़ों तथा वाहनों संबंधित कार्य, विवाह, संगीत, वस्त्र, आभूषण, यात्रा ,गृह-प्रवेश, वधु-प्रवेश, शिल्प, अन्न प्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन संस्कार आदि कार्य तथा द्वित्तीया, तृतीया, पंचमी तथा सप्तमी को किए जाने वाले कार्य किए जाने वाले कार्य शुभ है।

एकादशी- व्रतोपवास धार्मिक कार्य, देव उत्सव, वास्तुकर्म, युद्ध सम्बन्धित, शिल्प, यज्ञोपवीत, गृहारम्भ, यात्रा संबंधी, मद्यनिर्माण आदि शुभ कार्य किए जा सकते हैं।

द्वादशी- समस्त चर-स्थिर कार्य, उपनयन, विवाह, गाड़ी चलाना, सड़क निर्माण आदि शुभ कार्य किए जा सकते हैं लेकिन तैलमर्दन, नूतन गृह निर्माण-प्रवेश तथा यात्रा वर्ज्य है।

शुक्ल -त्रयोदशी- युद्ध कार्य, सेना, अस्त्र-शस्त्र, ध्वज निर्माण, राजकार्य, वास्तु कार्य, संगीत, किए जा सकते हैं लेकिन इस तिथि में यात्रा, गृह प्रवेश, नवीन वस्त्राभूषण तथा यज्ञोपवीत आदि कार्य वर्ज्य है। द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी तथा दशमी वर्णित कार्य किए जा सकते हैं।

चतुर्दशी- विष प्रयोग, शस्त्र धारण, क्रूर तथा उग्र कर्म करने चाहिए तथा चतुर्थी तिथि में किए जाने वाले कार्य किए जा सकते हैं लेकिन क्षौर और यात्रा करना वर्जित है।

पूर्णिमा- विवाह, यज्ञ, शिल्प, आभूषणों से संबंधित कार्य, वास्तुकर्म, संग्राम, जलाशय, यात्रा, शांतिक तथा पौष्टिक जैसे सभी मंगल कार्य किए जा सकते हैं।

अमावस्या- पितृकर्म, महादान करने चाहिए परन्तु अन्य शुभ कर्म ही करने चाहिए।

इसे भी समझे- जो कार्य जिस वार में सम्पन्न नहीं हो सकें तो उस कार्य को उस वार की काल होरा में करना चाहिए।

अमावस्या और पूर्णिमा का विशेष विचार - अमावस्या तिथि तीन प्रकार की होती है- सिनीवाली, दर्श और कुहू। प्रातःकाल से प्रारंभ होकर रात्रि पर्यन्त व्यापिनी अमावस्या **सिनीवाली** , चतुर्दशी से विद्धा **दर्श** तथा प्रतिपदा से युक्ता **कुहू** संज्ञक होती है। इसी प्रकार **पूर्णिमा** की भी दो संज्ञाएँ होती है- **अनुमति** और **राका**। रात्रि को एक कलाहीन और दिन में पूर्णचन्द्र से सम्पन्न **अनुमति** संज्ञक चतुर्दशी से युक्त होती है और रात्रि में पूर्ण चन्द्र सहित पूर्णिमा प्रतिपदा से युक्त **राका** होती है।

वार विचार- वारदोष , परिहार, भारतीय पञ्चाङ्ग विधान में सौर दिन को सावन दिन कहा जाता है। एक सूर्योदय से द्वितीय सूर्योदय होने के पूर्व समय को वार माना जाता है। सृष्टि का शुभारम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा एवं रविवार से हुई अतः सप्ताह का आरम्भ सूर्य, चन्द्र,मङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि आदि प्रमुख ग्रहों पर आधारित हैं जैसा कि पिछले **ग्रहभेदाध्याय** में आपने वार क्रम पढ़ा।

वारों की ध्रुव, स्थरादि संज्ञा- रविवार- चर और स्थिर संज्ञक है। अतः इस दिन नवीन वस्त्र धारण, यज्ञ, मन्त्रोपदेश, राज्याभिषेक, गीत, राज्यसेवा, औषधि क्रय, पशुओं का क्रय- विक्रय, सुवर्ण, रजत और ताम्र सम्बन्धित कार्य करना चाहिए।

सोमवार- चर और चल संज्ञक हैं। इस दिन ग्रहारम्भ, कृषि कार्य, उद्यान, गाय- भैस का क्रय-विक्रय, आभूषण निर्माण और गीत इत्यादि कार्य करने चाहिए।

पूर्वाह्न में देवता पूजन, संस्कारादि एवं मांगलिक कर्म, मध्यान काल में अतिथि सत्कार व व्यावहारिक कार्य तथा अपराह्न में श्राद्धादि पितृ कार्य करने चाहिए।

कुजवार- उग्र और क्रूर संज्ञक है। इस दिन सन्धि- विच्छेद, सैन्य एव युद्ध सामग्री का संग्रह, छल-कपट, सुवर्ण, मूगा आदि से सम्बन्धित कार्य करना चाहिए।

बुधवार- मिश्र और साधरण संज्ञक है। इसमें अध्ययनारम्भ, साहित्य, सगीत, कला,पाणिग्रहण, धान्यसंग्रह और प्रतिमा निर्माण का कार्य करना चाहिए।

गुरुवार- यह लघु और क्षिप्र संज्ञक है। इस दिन यज्ञ, विद्यारम्भ, धार्मिक कृत्य, वाहन क्रय- विक्रय, पौष्टिक कर्म, औषधि कार्य, प्रवास- आरम्भ और आभूषण धारण करने चाहिए।

शुक्रवार- मृदु और मैत्र संज्ञक है। इस वार में कृषि कार्य, वाणिज्य कार्य, मैत्री, ऐश्वर्यवर्द्धक कार्य, नूतन वस्त्र- आभूषणों का धारण, स्त्रीविषयक कार्य, नृत्य, गीतादि कार्य करने चाहिए।

शनिवार- दारुण और तीक्ष्ण संज्ञक है। इस वार में यज्ञ के लिए काष्ठ संग्रह, नवीन वाहन क्रय- विक्रय, अस्त्र- शस्त्र कार्य, असत्य भाषण, छल-कपट, तस्करी आदि कार्य करने चाहिए।

वार दोषों का सामान्य उपाय- यदि कार्य उस वार में आवश्यक हो तो रविवार को ताम्बूल भक्षण एवं दान, सोमवार को चन्द्र लगाना व दान, कुजवार को भोजन एवं पुष्प दान, बुधवार को बुध मंत्र का जप, गुरुवार को शिवाराधना एवं भोजन दान, शुक्रवार को श्वेत वस्त्र दान व धारण, शनिवार को ब्राह्मण सेवा एव तैलस्नान करने के बाद कार्य प्रारम्भ करना चाहिए।

नक्षत्र -आकाश में स्थित तारा समूह को नक्षत्र कहते हैं। अर्थात् आकाश में स्थित तारा समूह ही नक्षत्र हैं और ये चन्द्रमा के पथ से जुडे हैं। आकाश का मान 360 माना जाता है। इस भचक्र को 27 भागों मे विभाजित करने पर 13 अंश 20 कला का एक नक्षत्र का मान प्राप्त होता है तथा किसी समय पृथ्वी के जिस नक्षत्रपुञ्ज में चन्द्रमा दिखे उस समय वही नक्षत्र होता है। मूलत: 27 नक्षत्र होते हैं। 28 वां अभिजित (उत्तराषाढ़ा के चतुर्थ चरण की अन्तिम 15 घटी एवं श्रवणा नक्षत्र का प्रथम पाद की 4 घटी) नक्षत्र का

मान होता है। चन्द्र उक्त सत्ताईस नक्षत्रों में भ्रमण करता है तथा एक नक्षत्र में चार चरण होते हैं, प्रति चरण 3 अंश 20 कला का होता है।जैसा कि अथर्ववेद के 19वें काण्ड के 7वें सूक्त में 28 नक्षत्रों का वर्णन हैं।

सुहवमग्ने कृत्तिका रोहिणी चास्तु भद्रं मृगशिरः शमार्द्रा।

पुनर्वसू सूनृता चारु पुष्यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे ॥

पुण्यं पूर्वा फल्गुन्यौ चात्र हस्तश्चित्रा शिवा स्वाति सुखो मे अस्तु।

राधे विशाखे सुहवानुराधा ज्येष्ठा सुनक्षत्रमरिष्ट मूलम् ॥

अन्नं पूर्वा रासतां मे अषाढा ऊर्जं देव्युत्तरा आ वहन्तु।

अभिजिन्मे रासतां पुण्यमेव श्रवणः श्रविष्ठाः कुर्वतां सुपुष्टिम् ॥

आ मे महच्छतभिषग्वरीय आ मे द्वया प्रोष्ठपदा सुशर्म।

आ रेवती चाश्वयुजौ भगं म आ मे रयिं भरण्य आ वहन्तु ॥ (अथर्ववेद.19.7.2,3.4.5)

1. कृत्तिका, 2. रोहिणी, 3. मृगशिरा, 4. आर्द्रा, 5. पुनर्वसु, 6. पुष्य, 7. आश्लेषा, 8. मघा, 9.पूर्वा-फल्गुनी, 10. उत्तरा फल्गुनी, 11. हस्त, 12. चित्रा, 13. स्वाति, 14. विशाखा, 15. अनुराधा, 16. ज्येष्ठा, 17. मूल, 18. पूर्वाषाढा, 19. उत्तराषाढा, 20. अभिजित, 21. श्रवण, 22. श्रविष्ठा (धनिष्ठा), 23. शतभिषज् (शतभिषा), 25. दोनों प्रोष्ठपदा (पूर्वा भाद्रपदा और उत्तरा भाद्रपदा), 26 रेवती, 27. दो अश्वयुज् (अश्विनी) तथा 28. भरणी।

नक्षत्रसंज्ञा- स्वभाव के अनुसार नक्षत्रों के ध्रुव, चर, उग्र, मिश्र, लघु, मृदु और तीक्ष्ण ये सात भेद हैं।

ध्रुव एवं स्थिर नक्षत्र- रविवार के दिन रोहिणी, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद होने से बीजवपन, गृहप्रवेश, उद्यान, नगर प्रवेश, गायन आरम्भ, वस्त्र धारण, कामक्रीडा, आभूषण निर्माण एवं धारण, शुभकार्य, नृत्य एवं मैत्री आदि कार्य उत्तम माने जाते हैं।

चर - चल नक्षत्र- सोमवार को पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतमिषा आदि नक्षत्रों में वाहन क्रय-विक्रय और प्रशिक्षण,यात्रा, कला, दुकान खोलना इत्यादि कार्यो का प्रारंभ करना श्रेष्ठ हैं।

जन्म नक्षत्र में अन्नप्राशन, उपनयन और राज्याभिषेक आदि कार्य प्रशस्त हैं परन्तु सीमन्तोनयन, चूडाकरण, यात्रा, विवाह, औषधि सेवन एवं वादविवाद इन नक्षत्रों में वर्जित है।

उग्र एवं क्रूर नक्षत्र- मंगलवार को भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, और पूर्वाभाद्रपद यदि हो तो अग्नि कार्य, छल-कपट, यन्त्र- तंत्र का प्रयोग, पशु वशीकरण इत्यादि निन्दित कार्य उत्तम माने जाते हैं।

मिश्र एवं साधारण नक्षत्र- बुधवार को कृतिका, विशाखा यदि हो तो व्यापार, अग्नि कार्य, अपहरण,शस्त्र, विषघात और अग्निहोत्र कार्य उत्तम माने जाते हैं।

क्षिप्र एवं लघु नक्षत्र- गुरुवार को अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित, इत्यादि नक्षत्रों में से हो तो वस्तुओं का क्रय- विक्रय, रतिकार्य, साहित्य, सगीत, कला, चित्रकला, शास्त्राध्ययन-ज्ञानार्जन एवं वाहन कार्य, औषधि दान आदि कार्य श्रेष्ठ हैं।

मृदु – मैत्र नक्षत्र- मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती यदि शुक्रवार को हो तो गीत- वाद्य कार्य, गृह सम्बम्धी कार्य, बीजवपन, आभूषण निर्माण व धारण, क्रीड़ा, मित्रता और शपथ ग्रहण आदि कार्य कल्याणकारी माने जाते हैं।

तीक्ष्ण एवं दारुण नक्षत्र – आद्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, और मूल नक्षत्र अभिचार कर्म, मारण, उच्चाटन के लिए अनुष्ठान हाथी घोडों का व वाहन प्रशिक्षण,बीजवपन, पौष्टिक कर्म, विद्यारम्भ, मनोरंजक कार्य करने चाहिए।

का वर्गीकरण मुख ज्ञान के आधार पर तीन श्रेणियों में किया गया है।

उर्ध्व मुख नक्षत्र -रोहिणी, आद्रा, पुष्य, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाडा, श्रवण, धनिष्ठा, शतमिषा, उत्तरभाद्रपद उर्ध्वमुख नक्षत्र कहलाते हैं। इसमें देवालय निर्माण, गृह निर्माण, ध्वजारोहण, बगीचा निर्माण, यात्रा, राज्याभिषेक, और समस्त मांगलिक कार्य अभीष्ट फल देते हैं।

अधोमुख नक्षत्र -भरणी, कृतिका, आश्लेषा, मघा, पूर्वफाल्गुनी, विशाखा, मूल, पूर्वाषाढ़ा एवं पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र अधोमुख हैं। इसमें गणित, ज्यौतिष, शिल्पकला का अध्ययन, रेलगाडी सुरंग, कूप, तालाब, खान, नलकूप, नींव का खनन, गड़े द्रव्य का निष्कासन पशुओं का क्रय- विक्रय, वाहन क्रय- विक्रय तथा प्रशिक्षण आदि कार्य उत्तम माने जाते हैं।

तिर्यङ्-पार्श्वमुख नक्षत्र -अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, ज्येष्ठा और रेवती पार्श्वमुख नक्षत्र हैं, इसमें पशुओं का क्रय-विक्रय, वाहन क्रय- विक्रय व निर्माण तथा प्रशिक्षण, खेत में हल चलाना, यात्रा व पत्र व्यवहार के कार्य में उत्तम माने जाते हैं।

सुवर्णपाद नक्षत्र -रेवती, अश्विनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगशिरा, सुवर्णपाद नक्षत्र हैं, इनका फल सर्व सौख्यप्रद है।

रजतपाद नक्षत्र -आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा, मघा, पू. फाल्गुनी, उ. फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, ये रजतपाद नक्षत्र कहलाते हैं। इनका फल सौग्यदाभायक है।

लौहपाद नक्षत्र -विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, लौहपाद नक्षत्र हैं, इनका फल धनहानि है।

ताम्रपाद नक्षत्र- उ.षा., पू.षा., श्रवण, धनिष्ठा, शतमिषा, पू.भा., उ.भा. ताम्रपाद कहलाते हैं। इनका फल शुभ है।

पञ्चक विचार- धनिष्ठा, शतभिषक, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद और रेवती आदि पाँच नक्षत्र अनेक कार्यों में वर्ज्य हैं। इन नक्षत्रों में दक्षिण दिशा की यात्रा, प्रेतकार्य, काष्ठक्षेदन- काष्ठसंचय, पलंग निर्माण, ताम्बा एवं पीतल का संचय सर्वदा वर्ज्य है।

चोरी गत वस्तुओं का लाभालाभ विचार-

अन्धाक्ष नक्षत्र	मध्याक्ष नक्षत्र	मन्दाक्ष नक्षत्र	सुलोचन नक्षत्र
रोहिणी, पुष्य, उ.फाल्गुनी, विशाखा, पूर्वाषाढ़ा, धनिष्ठा, रेवती	भरणी, आर्द्रा, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित, पूर्वाभाद्रपद	अश्वनी, मृगशिरा, आश्लेषा, हस्त, अनुराधा, उत्तराषाढ़ा, शतभिषा	कृतिका, पुनर्वसु, पूर्व. फा. स्वाती, मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपद

पूर्व दिशा में शीघ्र लाभ।	पश्चिम दिशा में ज्ञात होने पर भी प्राप्ति नहीं।	दक्षिण दिशा में प्रयास से मिले	उत्तर दिशा में तथा प्राप्ति नहीं होती।

जैसा कि मुहूर्तचिन्तामणि में कहा गया है-

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं

मन्दाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं भवेत् ।

मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणात्वष्ट्रेन्द्रविध्यन्तक

स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षो भगम् ।।

यदि आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल यदि शनिवार को हो तो निन्दित कार्य उत्तम माना जाता है।

योग- सूर्य-चन्द्रमा की गति-योग ही 'योग' होता है। योग 27 प्रकार के होते हैं। चन्द्रमा और सूर्य दोनों मिलकर जितने समय में एक नक्षत्र के बराबर दूरी तय करते हैं उसे योग कहते हैं, क्योंकि चन्द्रमा और सूर्य की दूरी ही योग है । ग्रहों की विशेष स्थितियों को भी योग कहा जाता है। तारामण्डल में चन्द्रमा के पथ को 27 भागों में विभाजित किया गया है, प्रत्येक भाग को नक्षत्र कहा गया है।जब सूर्य और चन्द्रमा की गति में 13° 20′ का अन्तर आता होने से एक योग बनता है। इस प्रकार तारामण्डल का 13° अंश 20' का एक भाग नक्षत्र है। इस प्रकार दूरियों के आधार पर बनने वाले 27 योगों के नाम क्रमश: निम्नलिखित हैं- विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, इन्द्र और वैधृति। इन 27 योगों में से कुल 9 योगों को अशुभ माना जाता है और उनमें सभी प्रकार के शुभ कार्यों को नहीं करना चाहिए। यथा- विष्कुम्भ, अतिगण्ड, शूल, गण्ड, व्याघात, वज्र, व्यतीपात, परिघ और वैधृति। - **विष्कुम्भादि, शुभाशुभ विचार एवं अपवाद।**

करण विचार- तिथि का आधा करण होता है अर्थात् एक तिथि में दो करण होते हैं- एक पूर्वार्ध में तथा एक उत्तरार्ध में। कृष्णपक्ष चतुर्दशी के उत्तरार्ध से करणों की प्रवृत्ति होती

करण के प्रकार- दो प्रकार के करण होते हैं- (1) चर करण (2) स्थिर करण ।

बव करण में पौष्टिक, बालव में पठन, पाठन, यज्ञ एवं दानादि कर्म कौलव- तैलिल में मैत्री व स्त्रीविषयक, गर में बीजारोपण व हलप्रवहण, वणिज में व्यापारिक, विष्टि में युद्ध व क्रूर कर्म, शकुनि में ओषधि निर्माण, उपयोग व सिद्धि, चतुष्पद में राज्य कार्य व अन्य शुभ कर्म और किंस्तुघ्न करण में शुभ कार्य प्रशस्त होते हैं।

स्थिर करण- स्थिर करण 4 होते हैं- शकुनि, चतुष्पाद, नाग और किंस्तुघ्न। कृष्ण पक्ष चतुर्दशी के उत्तरार्ध में शकुनि, अमावस्या के पूर्वार्ध में चतुष्पाद, अमावस्या के उत्तरार्ध में नाग और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न करण होता है।

चर करण - चर करण 7 होते हैं- यथा- बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के उत्तरार्ध से बव आदि चर करण होते हैं। प्रतिपदा के उत्तरार्ध में बव, द्वितीया के पूर्वार्ध में बालव तथा उत्तरार्ध में कौलव इस प्रकार बव, बालव, कौलव,तैतिल, गर, वाणिज और विष्टि सात करणों की प्रवृत्ति होती है। यथा सूर्यसिद्धान्त में-

ध्रुवाणि शकुनिर्नागं तृतीय तु चतुष्पदम् ।
किस्तुघ्नतु चतुर्दश्या: कृष्णायाश्चापरार्धत: ॥
बवादीनि तत: सप्त चराख्यकरणानि च।
मासे उष्टकृत्व एकेकं करणानां प्रवर्तते ॥
तिथ्यर्धभोगं सर्वेषां करणानां प्रकल्पयेत् ।
एषा स्फूटगति: प्रोक्ता सूर्यादीनां खचारिणाम् ॥

भद्राविचार- विष्टि करण को भद्रा कहते हैं। भद्रा में शुभ कार्य वर्जित माने गए हैं। मास के कुल आठ तिथ्यर्धों में भद्रा करण का वास होता है। शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि तथा पूर्णिमा का पूर्वार्द्ध, चतुर्थी तिथि एवं एकादशी का उत्तरार्द्ध, कृष्ण पक्ष की तृतीया तिथि एवं दशमी का उत्तरार्द्ध, सप्तमी तिथि और चतुर्दशी के पूर्वार्ध में भद्रा का वास माना जाता है। इन आठ तिथियों में वास करने वाली भद्रा का अलग- अलग नामकरण किया गया है तथा ये क्रमशः कराली, नन्दिनी, रौद्री, सुमुखी, दुर्मुखी, त्रिशिरा, वैष्णवी तथा हंसी संज्ञा से जानी जाती हैं। तिथि के पूर्वार्द्ध में जो भद्रा होती है उसे दिवा भद्रा कहा गया है, जबकि

तिथि के उत्तरार्द्ध में भद्रा हो तो वह रात्रि भद्रा कही जाती है। दिवा भद्रा दिन में तथा रात्रि भद्रा रात्रि में हो तो क्रमशः कही जाएगी और दिवा भद्रा दिन में तथा रात्रि भद्रा दिन में होने पर विपरीत क्रम से होती है। पक्ष के आधार पर भी 'भद्रा' का विशेष नामकरण किया गया है, कृष्ण पक्ष की भद्रा वृश्चिकी संज्ञा एवं शुक्ल पक्ष की तिथियों वाली भद्रा 'सर्पिणी से जानी जाती है। वृश्चिकी भद्रा की पुच्छ और सर्पिणि भद्रा के मुख में शुभ कार्य नहीं करने चाहिए।

भद्रा करण का अंग विभाग-

भद्रा की अन्तिम 3 घटियों में आवश्यक कार्य हो तो शुभ कार्य कर सकते हैं।

घटी	5	1	11	4	6	3
अंग	मुख	कण्ठ	हृदय	नाभि	कटि	पुच्छ
फल	कार्यनाश	मृत्यु	द्रव्यनाश	द्वन्द्व	बुद्धिनाश	कार्यसिद्धि

भद्रा काल को उसके अंगों मुख, कण्ठ, हृदय, नाभि, कटि प्रदेश तथा पुच्छ में निवास करती है।

शुभाशुभ – बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज आदि चर करण मांगलिक कार्यों के लिए प्रशस्त हैं।भद्रा पुच्छ की घडियाँ शुभ तथा शुभ कार्यों के लिए श्रेष्ठ होती है। अतः युद्धादि क्रूर कार्यों को इसके काल में कर सकते हैं।स्थिर चार करणों में पितृ समन्धित कार्य शुभ होते हैं।

पक्ष ज्ञान - शुक्लपक्ष एवं कृष्णपक्ष। प्रत्येक मास में प्रायः तीस दिन होते हैं। तीस दिनों को चंद्रमा की कलाओं के घटने और बढ़ने के आधार पर चन्द्रमा के चक्र के दो भाग है। दो भाग यानी शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष में विभाजित किया गया है। एक पक्ष में पन्द्रह दिन होते हैं। शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा की कलाएँ अमावस्या के उपरांत 12 डिग्री हर दिन बढ़ने लगती हैं। इसलिए यह पक्ष रात में रोशनी से जगमगाता दिखाई पड़ता है। कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा पूर्णिमा के उपरांत प्रतिदिन क्रमशः 12 डिग्री अमावस्या तक घटता रहता है। अतः इस पक्ष में रात में चाँदनी नहीं होती है। ऋग्वेद के 10/85/19 वें मन्त्र में (नवो नवो भवति जायमानो....। लगध मुनि का "वेदांग ज्योतिष" और इस ग्रन्थ के षष्ठं श्लोक (माघ शुक्ल प्रपन्नस्य....

मास – दो पक्षों से मिलकर एक मास का निर्माण होता है। मास की गणना सूर्य और चन्द्र के आधार पर की जाती है। सूर्य के आधार पर गणना करने पर उसे सौर मास और चन्द्रमा से गणना करने पर चान्द्रमास की संज्ञा दी जाती है। चान्द्रमास की गणना शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि से और सौर मास की गणना मेष संक्रान्ति से चैत्रादि 12 मास प्रारंभ होते हैं।

नक्षत्रों के अनुसार चन्द्रमास -

हमारे भारतीय बारह मासों के नाम गगन मण्डल के नक्षत्रों के नामों पर रखे गये हैं। जिस मास में जो नक्षत्र आकाश में प्रायः रात्रि के आरम्भ से अन्त तक दिखाई देता है या जिस मास की पूर्णिमा को चन्द्रमा जिस नक्षत्र में होता है, उसी के नाम पर उस मास का नाम रखा गया है। यथा-चैत्र -चित्रा, स्वाति। वैशाख- विशाखा, अनुराधा। ज्येष्ठ- ज्येष्ठा, मूल। आषाढ़- पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़। श्रावण- श्रवणा, धनिष्ठा। शतभिषा, भाद्रपद- पूर्वभाद्र, उत्तरभाद्रपद। आश्विन- रेवती, अश्विनी, भरणी। कार्तिक- कृतिका, रोहिणी। मार्गशीर्ष- मृगशिरा, आर्द्रा। पौष- पुनवर्सु, पुष्य। माघ-अश्लेषा, मघा। फाल्गुन-पूर्व फाल्गुनी, उत्तर फाल्गुनी, हस्त।

सौरमास- स्पष्ट सूर्य की एक दिन सम्बन्धी गति तुल्य काल को सौर दिन कहते हैं। मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ और मीन ये बारह राशियों को ही बारह सौरमास माना जाता है। जिस दिन सूर्य जिस राशि में प्रवेश करता है उसी दिन संक्रान्ति होती है और इस राशि प्रवेश से ही सौरमास का दूसरा मास प्रारंभ माना जाता है सूर्य के प्रवेशानुसार मेषादि 12 सौरमास हैं। सूर्य की एक संक्रान्ति से दूसरी संक्रांति का समय सौरमास कहलाता है। अर्थात् सूर्य जितने समय तक एक राशि में रहता है, उसे सौर मास कहा जाता है। एक सौरमास में 30 दिन एवं 10 घण्टे होते हैं। इन्हीं बारह सौरमासों का एक सौर वर्ष होता है और सौरवर्ष में 365 दिन होते हैं। यथा सूर्यसिद्धान्त में

ऐन्दवस्तिथिभिस्तद्वत् संक्रान्त्या और उच्यते।

मासैर्द्वादशभिर्वर्षं दिव्यं तदह उच्यते।

इसे भी समझे- दिन-रात्रि मान, षडशीतिमुख संक्रान्तियों का मान, अयन, विषुव तथा संक्रान्तियों का पुण्यकाल, यज्ञ, उपनयनादि षोडष संस्कार, ऋण का आदान-प्रदान सौरमास द्वारा ही किए जाते हैं।

संवत्सर विचार-

बारह महीने का कालविशेष को ही संवत्सर कहते हैं। भारतीय वर्ष गणना प्रणालियों में प्रत्येक वर्ष को संवत् कहा जाता है। हिन्दू , बौद्ध , और जैन परम्पराओं में कई संवत् प्रचलित हैं जिसमे विक्रमी सवंत एवं शक संवत् प्रसिद्ध हैं। ब्राह्म, दैव, पित्र्य, सौर, सावन, चान्द्र, और बार्हस्पत्यादि काल हैं परन्तु **बार्हस्पत्य एवं चान्द्र मान से संवत्सर की गणना की जाती** है। प्रभवादि संवत्सरों का फल उनके नामानुगण होता है। शालिवाहन शक और विक्रम संवत् में 135 का अन्तर होता है तथा वर्तमान शक् संवत् में 135 जोड़ने पर विक्रम संवत्सर प्राप्त होता है।

यथा- 1945+135=2080 विक्रम संवत्सर।

यथा- संवत् 2023+9= 2032 प्राप्त संख्या को 60 से विभाजित करने पर 33 लब्धि तथा शेष 52। इस प्रकार 52 संवत्सर समाप्त हो गए और शुभकृत संवत्सर वर्तमान में है।

वर्तमान संवत् में 9 जोड़कर लब्ध संख्या को 60 से विभाजित करने पर गत संवत्सर प्राप्त होता है।

विश्व में प्रचलित ईस्वी संवत् का ये 2023 वर्ष है। पंचांगों में संवत् प्रचलित हैं, तथा भारत के बहुत से क्षेत्रों में विक्रम संवत् प्रचलित है। विक्रम संवत् का आरम्भ मार्च एव अप्रैल से होता है। यथा- मार्च व अप्रैल 2023 से विक्रमी संवत् 2080 है।

संवत् या तो कार्तिक कृष्ण पक्ष से आरम्भ होते हैं या चैत्र कृष्ण पक्ष से तथा कार्तिक से आरम्भ होने वाले संवत् को कर्तक संवत् कहते हैं। संवत् में अमावस्या को अंत होने वाले मास (अमावस्यान्त मास) या पूर्णिमा को अन्त होने वाले मास (पूर्णिमान्त) मास कहा जाता है। किसी संवत् में पूर्णिमान्त मास का और किसी में अमावस्यान्त मास का प्रयोग होता है । भारत के अलग अलग स्थानों पर एक ही नाम की संवत् परम्परा में पूर्णिमांत या अमावस्यांत मास का प्रयोग हो सकता है। विक्रम संवत् का आरम्भ चैत्र मास के कृष्ण पक्ष से होता है। कार्तिक कृष्ण पक्ष दिवाली से आरम्भ होता है , इस दिन से वर्ष का आरंभ होने वाले संवत् को विक्रम संवत् (कर्तक) कहा जाता है। संवत् के अनुसार एक वर्ष की अवधि को भी संवत् कहा जा सकता है।

युगों के अधिपति-

12 युग	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
स्वामी	विष्णु	बृहस्पति	इन्द्र	अग्नि	विश्वकर्मा	अहिर्बुध्न्य	पितर	विश्वेदेवा	चन्द्र	इन्द्राग्नि	अश्वनी	भग

ऋतुज्ञान चक्र-

मेषादि दो-दो राशियों का भोगकाल ऋतु कहलाता है। इस प्रकार कालगणना में एक वर्ष को छः ऋतुओं में विभाजित किया गया है। जैसा कि सूर्य सिद्धान्त में कहा गया है - **"द्विराशिनाथा ऋतवस्ततोऽपि शिशिरादयः"** सौर गणना के अनुसार दो सक्रान्तियों की और दो चन्द्र मास की भी एक ऋतु होती है।

यथा- **सूर्य एवं चान्द्र मास के अनुसार वसंतादि ऋतु चक्र-**

ऋतुएँ	वसन्त	ग्रीष्म	वर्षा	शरद	हेमंत	शिशिर
सौरमास	मीन,मेष	वृषभ, मिथुन	कर्क, सिंह	कन्या, तुला	वृश्चिक, धनु	मकर, कुंभ
चान्द्रमास	चैत्र	ज्येष्ठ	श्रावण	आश्विन	मार्गशीर्ष	माघ
मास	वैशाख	आषाढ़	भाद्रपद	कातिक	पौष	फाल्गुन

अयन ज्ञान – उत्तरायण और दक्षिणायण।

अयन का शाब्दिक अर्थ चलना। अर्थात् सूर्य कर्कादि छः राशियों में दक्षिण दिशा की ओर गमन दक्षिणायन तथा मकर आदि छः राशियों में उत्तर दिशा की ओर गमन उतरायण काल कहलाता है। क्रान्तिवृत्त का उत्तर एव दक्षिण गोल विभाजन ही उत्तरायण और दक्षिणायण कहलाता है। सौर-वर्ष के दो भाग हैं- उत्तरायण छः मास का और दक्षिणायन भी छः मास का। इस प्रकार दो अयन उत्तरायण और दक्षिणायन होते हैं। उत्तरायण को देवताओं का दिन एवं दक्षिणायन में देवताओं की रात्रि होती है। श्रविष्ठादि (धनिष्ठा के आरम्भ) में सूर्य व चन्द्रमा उत्तर की ओर गमन (उत्तरायण) करते हैं तथा सार्पार्ध (आश्लेषा के आधे) में दक्षिण की ओर प्रवृत्ति

उत्तरायण तीर्थ यात्रा, प्रतिष्ठा, यज्ञोपवीत, ग्रहप्रवेश, कूप निर्माण, नूतन गृहप्रवेश और विवाह संस्कारादि आदि कार्यों के लिए शुभ समय है।

(दक्षिणायन) होते हैं। सर्वदा सूर्य माघ और श्रावण मासों में क्रमशः उत्तर एवं दक्षिण की ओर भ्रमण करता है।

स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ।

स्यात् तदादियुगं माघस्तपः शुक्लोऽयनं ह्ययुदक्।। (याजुष. ज्यो. 6)

उत्तरायण - मकर से मिथुन पर्यन्त सूर्य उत्तरायण होता है।(माघ से आषाढ़) यह समय देवताओं का दिन माना जाता है। शिशिर वसन्त और ग्रीष्म ऋतुएँ उत्तरायण को सुशोभित करती हैं।

दक्षिणायण- सूर्य कर्क से धनु राशि पर्यन्त दक्षिणायन में रहता है।(श्रावण से पौष) सूर्य कर्क राशि में प्रवेश करता है तब सूर्य दक्षिणायन होता है। वर्षा, शरद और हेमन्त तीन ऋतुएँ इस समय में अपनी सुषमा विखेरती हैं। इस अयन के अधिपति पितृ हैं। दक्षिणायन में उग्र देवताओं की प्रतिष्ठा, व्रत और उपवास का समय होता है। इस समय व्रत और उपासना करने से से रोग और कष्ट समाप्त होते हैं। इस समय विवाह और उपनयन आदि संस्कार वर्जित है, परन्तु **यदि सूर्य वृश्चिक राशि में हो तो अगहन् मास में ये सब किया जा सकता है। उत्तरायण में मीन मास में विवाह वर्जित है।**

अधिवर्ष में, चैत्र मे 31 दिन होते हैं और इसकी शुरुआत 21 मार्च को होती है। वर्ष की पहली छमाही के सभी महीने 31 दिन के होते है, जिसका कारण इस समय कांतिवृत्त में सूरज की धीमी गति है। महीनों के नाम पुराने, हिन्दू चन्द्र-सौर पंचांग से लिए गये हैं इसलिए वर्तनी भिन्न रूपों में मौजूद है और कौन सी तिथि किस कैलेंडर से संबंधित है इसके बारे मे भ्रम बना रहता है।

शक् युग, का पहला वर्ष सामान्य युग के 78 वें वर्ष से शुरु होता है, अधिवर्ष निर्धारित करने के शक् वर्ष मे 78 जोड़ दें- यदि ग्रेगोरियन कैलेण्डर में परिणाम एक अधिवर्ष है, तो शक् वर्ष भी एक अधिवर्ष ही होगा।

वर्ष को संवत्सर कहा जाता है। जैसे प्रत्येक माह के नाम होते हैं उसी तरह प्रत्येक वर्ष के नाम अलग अलग होते हैं। जैसे बारह माह होते हैं उसी तरह 60 संवत्सर होते हैं। संवत्सर अर्थात बारह महीने के कालविशेष को ही संवत्सर कहते हैं। भारतीय संवत्सर पाँच प्रकार के होते हैं। इनमें से मुख्यतः तीन हैं- सावन, चान्द्र तथा सौर।

60 संवत्सरों के नाम तथा क्रम इस प्रकार हैं-

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः।

अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैव च ।।

ईश्वरो बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः।

चित्रभानुः सुभानुश्चतारणः पार्थिवो व्ययः ।।

सर्वजित्सर्वधारी च विरोधीविकृतिः खरः।

नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथदुर्मुखौ ।।

हेमलम्बी विलम्बी च विकारी शार्वरी प्लवः।

शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसुपराभवौ ।।

प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत्।

परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसोऽनलः ।।

पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्रदुर्मती ।

दुन्दुभी रुधिरोगारी रक्ताक्षी क्रोधनः क्षयः ।।

(1) प्रभव, (2) विभव, (3) शुक्ल, (4) प्रमोद, (5) प्रजापति, (6) अंगिरा, (7) श्रीमुख, (8) भाव, (9) युवा, (10) धाता, (11) ईश्वर, (12) बहुधान्य, (13) प्रमाथी, (14) विक्रम, (15) विषु, (16) चित्रभानु, (17) स्वभानु, (18) तारण, (19) पार्थिव, (20) व्यय, (21) सर्वजित, (22) सर्वधारी, (23) विरोधी, (24) विकृति, (25) खर, (26) नन्दन, (27) विजय, (28) जय, (29) मन्मथ, (30) दुर्मुख, (31) हेमलम्ब, (32) विलम्ब, (33) विकारी, (34) शर्वरी, (35) प्लव, (36) शुभकृत, (37) शोभन, (38) क्रोधी, (39) विश्वावसु, (40) पराभव, (41) प्लवंग, (42) कीलक, (43) सौम्य, (44) साधारण, (45) विरोधकृत, (46) परिधावी, (47) प्रमादी, (48) आनन्द, (49) राक्षस, (50) नल, (51) पिंगल, (52) काल, (53) सिद्धार्थ, (54) रौद्रि, (55) दुर्मति, (56) दुंदुभि, (57) रुधिरोद्गारी, (58) रक्ताक्ष, (59) क्रोधन (60) क्षय।

इस इकाई में पञ्चाङ्ग के घटकों को उदाहरण सहित विस्तृत रूप से समझाया गया हैं। जिससे छात्र सरल रूप से समझ सकें और पञ्चाङ्ग का उपयोग कर सकें।

भचक्र परिचय-भचक्र (राशि चक्र) का अर्थ राशि अथवा नक्षत्र होता है। इसी कारण राशियों के समूह को "भचक्र या राशिचक्र कहा जाता है। यह भचक एक कल्पित वृत्त है। इसी वृत्त के बीच से सूर्य का संक्रमण पथ गुजरता है। इसी कारण इसे क्रान्तिवृत्त कहा जाता है। इस वृत्त का विस्तार 360 अंश है। इसके 12 समान भाग करने पर प्रत्येक का मान 30 अंश होता है। भचक्र के इसी 30 अंश वाले एक भाग को राशि कहते हैं। 12 राशियाँ खचक्र की परिधि पर स्थित हैं। यह खचक्र अपनी धुरी पर दिन में एक बार पूर्व से पश्चिम की तरफ घूमता है। इसी भ्रमण के कारण राशियों का उदय व अस्त होता है। राशि भचक्र के 30 अंशात्मक एक भाग को राशि कहते हैं, इन राशियों की संख्या 12 हैं यथा-मेष /Aries, वृष/ Taurus, मिथुन /Gemini, कर्क/ Cancer, सिह /Leo, कन्या/ Virgo, तुला/ Libra,वृश्चिक/ Scorpio, घनु/ Sagittarius, मकर/ Caprice , कुम्भ/ Aquarius, मीन/ Pisces.

मेषवृषमिथुनकर्कटसिंहाः कन्या तुलाऽथवृश्चाककः।
धन्वी मकरः कुम्भो मीनास्विति राशिनामानि ।।

12 मीन	1 मेष	2 वृष	3 मिथुन
11कुम्भ			4 कर्क
10 मकर			5 सिंह
9 धनु	8 वृश्चिक	7 तुला	6 कन्या

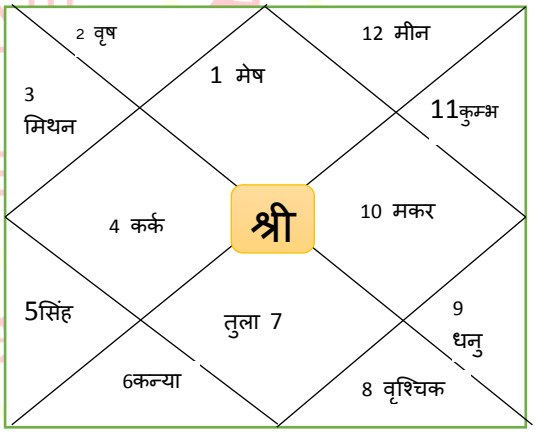

जैसा कि भचक्र में आपने राशियों का ज्ञान प्राप्त किया इसी प्रकार भचक्र में 27 नक्षत्रों की स्थिति होती है।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ (ऋ. 10.190.3)

सोम व सूर्य के नक्षत्रों में संचरण के गतागत विज्ञान को जो जानता है वह लोक में सन्तति, मन वाच्छित सफलता प्राप्त करते हुए, स्वर्गलोक में सुशोभित होता है। जैसा कि यजुर्वेद में कहा गया है-

सोमसूर्यस्तृचरितं विद्वान् वेद विदश्नुते।

सोमसूर्यस्तृचरितं लोकं लोके च सन्ततिम्।।43।।

लेकिन राशियों के अनुसार हम नक्षत्रों का अध्ययन करें तो मेष राशि के आरम्भ में अश्विनी तथा अन्तिम मीन राशि के अन्त में अन्तिम नक्षत्र रेवती स्थित है। प्रत्येक नक्षत्र का विस्तार 13 अंश व 20 कला होता है। इसके चार समान भाग होते हैं। इन्हें चरण या पाद कहते हैं। नौ चरणों अर्थात् सवा दो (2.1/2) नक्षत्रों से एक राशि बनती है। इन नक्षत्रों के प्रत्येक चरण के प्रतिनिधि के रूप में वर्णमाला के मात्रा सहित चार-चार अक्षर माने जाते हैं। जन्म के समय जिस नक्षत्र का जो चरण वर्तमान में होता है, उस चरण के अक्षर से शुरू होने वाला नाम शिशु का जन्म नाम माना जाता है। जैसा कि यजुर्वेद में कहा गया है-

नक्षत्रदेवता एता एताभिर्यज्ञकर्मणि।

यजमानस्य शास्त्रज्ञैर्नाम नक्षत्रजं स्मृतम्।।35।।

नक्षत्रों के नाम व उनके चरणाक्षर-

क्र.सं.	नक्षत्र	चरण	क्र.सं.	नक्षत्र	चरण
1.	अश्विनी	चू, चे, चो, ल	16	विशाखा	ति तु ते तो
2.	भरणी	लि लु ले लो	17	अनुराधा	न नी नु ने
3.	कृत्तिका	अ ई उ ए	18	ज्येष्ठा	नो या यि यु
4.	रोहिणी	ओ व वी वु	19	मूल	ये यो भा भी
5.	मृगशिरा	वे वो का की	20	पूर्वाषाढ़ा	भु थ भ ढ
6.	आर्द्रा	कु घ ङ छ	21	उत्तराषाढ़ा	भे भो ज जि
7.	पुनर्वसु	के को ह ही	22	अभिजित	जु जे जो श
8.	पुष्य	हु हे हो ड	23	श्रवण	शि शु शे शो
9.	आश्लेषा	डी डू डे डो	24	धनिष्ठा	ग गि गु गे
10.	मघा	म मी मु मे	25	शतभिषा	गो स सि सु
11.	पूर्वफाल्गुनी	मो टा टि टू	26	पूर्वभाद्रपद	से सो द दि

12.	उत्तरफल्गुनी	टे टो पा पी	27	उत्तरभाद्रपद	दु ख झ ध
13.	हस्त	पु ष ड ठ	28	रेवती	दे दो च चि
14.	चित्रा	पे पो र री			
15.	स्वाति	रू रे रो त			

इस प्रकार हम सामान्य भचक्र का ज्ञान कर सकेंगे-

जातकर्म-नामाकरण मुहूर्त्त- अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या आदि पर्व और रिक्ता(4,9,14) तिथियों को त्यागकर अन्य तिथियों में तथा शुभ दिनों जन्म से ग्यारहवें अथवा बारहवें दिन **ध्रुव** (उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाड़ा, उत्तरभाद्रपद् रोहिणी) **मृदु**(मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) **क्षिप्र**(अश्वनी, हस्त, पुष्य, अभिजित) एवं चर संज्ञक (स्वाती, पुष्य, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा) नक्षत्रों में शिशु का (जन्म समय के समय न होने पर जातकर्म) नामाकरण संस्कार करना चाहिए।

जातकर्म संस्कार का प्रयोजन-

जातक की श्री वृद्धि हेतु और ग्रहदोष शान्ति के लिए शिशु के जन्म होते ही अवश्य करना चाहिए।

यथा- **प्राङ्नाभिवर्द्धनात् पुंसो जातकर्म विधीयते।।** मनु.

जन्म समय ही ग्रहशान्ति करना चाहिए क्योंकि सूतक प्रारम्भ नालच्छेदन के समय से प्रारम्भ होता है।

यावान्नोच्छिद्यते नालं तावन्नाप्नोति सूतकम्।।

छिन्ने नाले ततः पश्चात् सूतकं तु विधीयते।। जैमिनी

जातकर्म क्रियां कुर्यात् पुत्रायुः श्रीविवृद्धये।

ग्रहदोषविनाशाय सूतिकाऽशुभविच्छिदे।। भृगु

इकाई समाप्त

प्रश्न-1. पंचाग के कितने अङ्ग होते है? पाँच ।

प्रश्न-2. कितनी तिथियाँ होती हैं? तीस (30)।

प्रश्न-3. स्थिर करण कितने प्रकार के होते हैं ? **चार** (4)।

प्रश्न-4. ऋतुएँ कितने प्रकार की होती हैं? **छः प्रकार** (6)।

प्रश्न-5. तिथियों को संज्ञा दी गई है? **नन्दा-भद्रा - जया – रिक्ता- पूर्णा** ।

प्रश्न-6.गण्डान्त कितने प्रकार के होते हैं? **तीन (3)।तिथि- नक्षत्र- लग्न।**

प्रश्न-7. संवत्सर कितने होते हैं? 60 **संवत्सर**।

प्रश्न-8. तिथि, करण, विवाह, मुण्डन, जातकर्म व्रत-उपवास, यात्रा की क्रियाएँ तथा अन्य सभी कार्य, किस मान के अनुसार होते हैं? **चान्द्रमान से**।

प्रश्न-9. संक्रान्तियों का पुण्यकाल किस मान से ज्ञात किया जाता है? **सौरमान से** ।

प्रश्न-10. एक तिथि में कितने अंश होते हैं? 30 **अंश**।

निम्नलिखित प्रश्नों के रिक्तस्थानों की पूर्ति कीजिए-

प्रश्न-1. तिथि का आधा .....होता है । **करण** ।

प्रश्न-2.सूर्य से चन्द्रमा के .....आगे जाने पर 1 तिथि होती है।**12 अंश**

प्रश्न-3. चैत्रादि..... होते हैं। 12 मास ।

प्रश्न-4. सूर्य कर्कादि छः राशियों में दक्षिण दिशा की ओर गमन .....तथा मकर आदि छः राशियों में उत्तर दिशा की ओर गमन .....काल कहलाता है। दक्षिणायन - उतरायण

बोध प्रश्न-

1. पचाङ्ग का सामान्य परिचय दीजिए?
2. गण्डान्त की विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए?
3. उत्तरायण तथा दक्षिणायन में करने योग्य कार्यों की व्याख्या कीजिए?
4. चोरी गत (नष्ट द्रव्य) वस्तुओं का लाभालाभ विचार नक्षत्रों के आधार विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए?
5. पञ्चकों का विचार कैसे किया जाता है वर्णन कीजिए?
6. जन्म के समय नक्षत्र पादों का कैसे विचार किया जाता है?
7. तिथियों के अधिपतियों का तिथि सहित नाम लिखिए?

इकाईः 10, मूल सूत्रपाठ

जातकर्म, नामकरण संस्कार का गृह्यसूत्र अन्तर्गत मूलसूत्र पाठ

अथ षोडशकण्डिका-

सोष्यन्तीमद्भिरभ्युक्षति। एजतु दशमास्य इति, प्राग्यस्यैत इति। अथावरावपतनम्- अवैतु पृश्निशेवलꣳ शुने जराय्वत्तवे। नैवमासेन पीवरीं न कस्मिꣳश्चनायतनमवजरायुपद्यतामिति। जातस्य कुमारस्याच्छिन्नायां नाड्यां मेधाजननायुष्ये करोति। अनामिकया सुवर्णान्तर्हितया मधुघृते प्राशयति घृतं वा, भूस्त्वयि दधामि, भुवस्त्वयि दधामि, स्वस्त्वयि दधामि, भूर्भुवः स्वः सर्वं त्वयि दधामीति। अथास्यायुष्यं करोति। नाभ्यां दक्षिणे वा कर्णे जपति "अग्निरायुष्मान्त्सवनस्पतिभिरायुष्माꣳस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि। सोम आयुष्मान्त्स औषधीभिरायुष्माꣳस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि । ब्रह्मायुष्मत्तद्ब्राह्मणैरायुष्मत्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि। देवा अयुष्मन्तस्तेऽमृतेनायुष्मन्तस्तेन् त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि। ऋषय आयुष्मन्तस्ते व्रतैरायुष्मन्तस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि। पितर आयुष्मन्तस्ते स्वधाभिरायुष्मन्तस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि। यज्ञ आयुष्मान्त्स दक्षिणाभिरायुष्माꣳस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि। समुद्र आयुष्मान्त्स स्रवन्तीभिरायुष्माꣳस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तं करोमि।

त्रिस्त्रिस्त्र्यायुषमिति च। स यदि कामयेत सर्वमायुरियादिति वात्सप्रेणैनमभिमृशेत्। दिवस्परीत्येतस्यानुवाकस्योत्तमामृच परिशिनष्टि। प्रतिदिशं पञ्च ब्राह्मणानवस्थाप्य ब्रूयादिममनुप्राणितेति । पुर्वी ब्रूयात् प्राणेति। व्यानेति दक्षिणः। अपानेत्यपरः। उदानेत्युत्तरः। समानेति पञ्चम उपरिष्टादवेक्षमाणो ब्रूयात्। स्वयं वा कुर्यादनुपरिक्राममविद्यमानेषु। स यस्मिन् देशे जातो भवति तमभिमन्त्रयते "वेद ते भूमि हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम्। वेदाहं तन्मां तद्विद्यात् पश्येम शरदः शतञ्जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शत मिति। अथैनमभिमृशति-"अश्मा भव परशुर्भव हिरण्यमस्तृतं भव। आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शत मिति । अथास्य मातरमभिमन्त्रयते "इळासि मैत्रावरुणी वीरे वीरमजीजनथाः। सा त्वं वीरवती भव यास्मान् वीरवतोऽकर "दिति । अथास्यै दक्षिणꣳ स्तनं प्रक्षाल्य प्रयच्छति "इम स्तन"मिति, "यस्ते स्तन" इत्युत्तरमेताभ्याम्। उदपात्रꣳ शिरस्तो निदधाति आपो देवेषु जाग्रथ यथा देवेषु जाग्रथ। एवमस्याꣳ सूतिकाया सपुत्रिकायाꣳ जाग्रथेति। द्वारदेशे सूतिकाग्निमुपसमाधायोत्थानात्सन्धिवेलयोः फलीकरणमिश्रान् सर्षपानग्नावावपति- "शण्डा मर्का उपवीरः शौण्डिकेय उलूकलः। मलिम्लुचो द्रोणासश्च्यवनो नश्यतादितः स्वाहा। आलिखन्न निमिषः किं

वदन्त उपश्रुतिर्हर्यक्षः कुम्भीशत्रुः पात्रपाणिर्नू मणिर्हन्त्रीमुखः सर्षपारुणश्च्यवनो नश्यतादितः स्वाहेति। यदि कुमार उपद्रवेज्जालेन प्रच्छाद्योत्तरीयेण वा पिताऽङ्क आधाय जपति- "कूर्कुरः सुकुर्कुरः कूर्कुरो बालबन्धनः। चेच्चेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो लपेतापहर तत्सत्यम्। यत्ते देवा वरमददुः स त्वं कुमारमेव वा वृणीथाः । चेच्चेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो लपेतापहर तत्सत्यम् । यत्ते सरमा माता सीसरः पिता श्यामशबलौ भ्रातरौ। चेच्चेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो लपेतापहरेति । अभिमृशति न नामयति न रुदति न हृष्यति न ग्लायति, यत्र वयं वदामो यत्र चाभिमृशामसीति॥ इति षोडशकण्डिका ॥

अथ यमलजनने प्रायश्चित्तम् - अथातो यमलजनने प्रायश्चित्तं व्याख्यास्यामः। यस्य भार्या गौर्दासी महिषी वडवा वा विकृत प्रसवेत् प्रायश्चित्ती भवेत्। पूर्णे दशाहे चतुर्णां क्षीरवृक्षाणां कषयमुपसꣳहरेत्। प्लक्षवटौदुम्बराश्वत्थशमी देवदारु गोरसर्षपास्तेषामयो मिश्रꣳ हिरण्यदूर्वाङ्कुराम्रपल्लवैरष्टौ कलशान् प्रपूर्य सर्वौषधीनां च दम्पती स्नापयित्वा "आपो हिष्ठे"ति तिसृभिः कया नश्चित्र इति द्वाभ्यां पञ्चैन्द्रेण पञ्च वारुणेनेदमापः प्रवहतेत्यापाद्यमितिः स्नापयित्त्वाऽलङ्कृत्य तौ दर्भेषूपवेश्य तत्र मारुतꣳ स्थालीपाकꣳ श्रपयित्वाऽऽज्यभागाविष्ट्वाऽऽज्याहुतीर्जुहोति पूर्वोक्तैः स्नपनमन्त्रैः । स्थालीपाकस्य जुहोति अग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा, पवमानाय स्वाहा, पावकाय स्वाहा, मरुताय स्वाहा, मारुताय स्वाहा, मरुद्भ्यः स्वाहा, यमाय स्वाहा, न्तकाय स्वाहा, मृत्यवे स्वाहा, ब्रह्मणे स्वाहा, ऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति । एतदेव गृहोत्पातेषूलूककपोतगृध्रः श्येनो वा गृहं प्रविशेत्स्तम्भः प्रोरोहेद्वल्वीक मधुजालं वा भवेदुदकुम्भप्रज्वलनासन शयनयानभङ्गेषु गृहगोधिका कृकलास शरीरसर्पण इत्येवं छत्रध्वजविनाशे सार्पे नैऋते गण्डयोगेष्वन्येष्वप्युत्पातेषु भूकम्पोल्कापात काकसर्पसङ्गमप्रेक्षणादिष्वेतदेव प्रायश्चित्तं गृहशान्त्युक्तेन विधिना कृत्वाऽचार्याय वरं दत्वा ब्राह्मणान्भोजयित्वा स्वस्तिवाच्याशिषः प्रतिगृह्य शान्तिर्भवति ॥

अथ मारुत-यमल-चरुविधानम्-

अथ यमलचरु मारुतं व्याख्यास्यामः। यस्य च यमलौ पुत्रौ दारिका वा प्रजायेत पूर्णे दशाहे चतुर्णां क्षीरवृक्षाणा काषायमाहृत्याश्वत्थप्लक्षन्यग्रोधौदुम्बराश्चत्वारोऽविधवाः स्नापयति ब्रह्मचारिणो वा शुक्लवससे ऐन्द्रीदिशमुदीचीं वा मङ्गलं पूर्ववदगायन्त्यो यमलिनीर स्नापयन्ति। आचार्यः स्नापयति "वसोः पवित्रेण शतधारेण चाष्टभिः कलशैः। स्नात्वाप्रतिरथं जपेत् इदमापः प्रवहतेति च। तौ स्नापितौ वरं

प्रयच्छत्यनड्वहमातृभ्यश्च हिरण्यं वस्त्रमेव परितोषणम्। वाजेवाजेऽवतेति जपति। आधारं मारुतं चरुं जुहोति मरुताय स्वाहा, मारुताय स्वाहा, मरुभ्यो विष्णवे प्रजापतये विश्वेभ्यो देवेभ्योऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति। प्राशनान्ते शेषं चरु गृहीत्वाऽश्वत्थं प्रदक्षिणीकृत्योपविशेत्। तदेव तन्त्रꣳ समाप्य। ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ इति मारुत-यमल-चरुविधानम्॥

अथ मूलविधिः-

अथातो मूलविधिं व्याख्यास्यामः। मूलांशे प्रथमे पितुर्नेष्टो द्वितीये मातुस्तृतीये धनधान्यस्य चतुर्थे कुलशोका वध वय पुण्यभागी स्यात्। मूलनक्षत्रे मूलविधानं कुर्यात्। सर्वौषध्या सर्वगन्धैश्च संयुक्त तत्रोदकुम्भं कृत्वा मूलनमान पुष्यरत्नसहितꣳ श्वेतसिद्धार्थकुसुमायुक्तं कुर्यात्। तस्मिन रुद्राग्ञपित्वाप्रतिरथꣳ रक्षोघ्नं च सूक्तम्। द्वितीयोदकुम्भं कृत्वा सद्यः श्रग्रवणसंयुक्त तस्मिन्नुपरिष्टान्मूलानि धारयेद्वशापाचे कृत्वा वस्त्रे बध्या। तस्मिन् प्रधानानि मूलानि वक्ष्याम्यष्टादशमाषꣳ हिरण्यमूलꣳ सप्तधान्यानि प्रथमा कार्म्मर्ष्या सहदेव्यपराजिता बालापाठा शङ्खपुष्प्यधोपुष्टी मधुयष्टिका चक्राङ्कितामयूरशिखा काकजङ्घा कुमारीद्वयं जीवन्त्यपामार्गभृङ्गराजलक्ष्मणा सुलक्ष्मणा जाति व्याघ्रपत्रश्चक्रमर्दकः सिद्धेश्वरोऽश्वत्थौदु म्बरपलाशप्लक्षवटार्क दूर्वारोहितशमीशतावरीत्येवमादि मूलशत पूरयित्वा तस्मिन्निषिद्धानि मूलानि वक्ष्यामि। बैल्वधवनिम्बकदम्बराजवृक्षोक्षशालाप्रियालु दधिकपित्थकोविदारश्लेष्मातक बिभीतकशाल्मलिररलुसर्वकण्ठकिवर्जम्। तत्राभिषेकं कुर्यात्पितुः शिशोर्जनन्या देवस्य त्वेति। औदुम्बर्यासन्दीमुदगग्रामान्नन्तृणाति । तत्रासीनान्त्सम्यातेनैके नाभिषिञ्चति शिरसोऽध्यनुलोम शिरो मे श्रीर्यशो मुखमिति च यथालिङ्गमङ्गानि सम्मृशति। स्नानादूर्ध्वं नैऋतꣳस्थालीपाकꣳ श्रपयित्वा, कार्म्मर्यमय सुक्खुवं प्रतप्य समृज्यान्वारब्धः आघारावाज्यभागौ हुत्वासुन्वन्तमिति चतस्रः स्थालीपाकेन जुहुयात् पञ्चदशाज्याहुतीश्चतुर्गृहीतेन जुहोति कृणुष्व पाज इति पञ्च, मा नस्तोक इति द्वे, या ते रुद्र शिवा तनूरिति षट्, अग्निरक्षाꣳसि सेधति- शुक्रशोचिरमर्त्यः शुचिः पावक ईड्य इति त्वन्नः सोम विश्वतो रक्षा राजन्नघायतो नरिष्ये त्वावतः सखेति। स्विष्टकृदादा प्राशनान्ते गौः कृष्णाश्च तिलाः हेममयमूलꣳ सप्तधान्यसंयुक्तमाचार्याय वरं दद्यात्। कृष्णोऽनड्वान् ब्राह्मणे दद्यात् । नक्षत्रसूचकेभ्यो वासो दद्यात् । अन्येभ्यो बाह्मणेभ्यः सुवर्णं दद्यात् । कृष्णागोपाय सेन ब्राह्मणान् भोजयेत् । सार्पदैवते गण्डजातानामेष एव विधिः कात्यायनेनोक्तः ॥ इति मूलविधिः ॥

अथ सप्तदशकण्डिका नामकरण

दशम्यामुत्थाप्य ब्राह्मणान् भोजयित्वा पिता नाम करोति। द्व्यक्षर चतुरक्षर वा घोषवदाद्यान्तरन्तस्थं दीर्घाभिनिष्ठानं कृतं कुर्यान्न तद्धितम्। अयुजाक्षरमाकारान्तः१ स्त्रियै तद्धितम्। शर्म ब्राह्मणस्य, वर्म क्षत्रियस्य, गुप्तेति वैश्यस्य। चतुर्थे मासि निष्क्रमणिका। सूर्यमुदीक्षयति "तच्चक्षु" रिति॥

इति सप्तदशकण्डिका ॥

सहायक ग्रन्थसूची-

- वैदिक साहित्य का इतिहास
- रामकृष्ण विरचित,संस्कार गणपति, पण्डित ढुण्ढिराज शास्त्री,चौखम्बासंस्कृत सीरिज् वाराणसी
- धर्मशास्त्रे षोडश संस्काराः(रा.सं.विद्यापीठ.तिरुपति)
- बृहत् ब्रह्मकर्मसमुच्चय(यज्ञदत्तदुर्गाशंकर शास्त्री)
- मुहूर्त्तचिन्तामणि
- पारस्करगृह्यसूत्र, डॉ. बह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी
- गोभिलगृह्यसूत्र, श्री चिन्तामणी भट्टाचार्य, मुनसीराम मनोहरलाल प. पीवीटी, टीटीडी. दिल्ली
- सूर्यसिद्धान्त, प्रो. रामचन्द्र पाण्डे, चौखम्बा सुरभारती, प्रकाशन वाराणसी

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

द्वारा सञ्चालित एवं प्रस्तावित राष्ट्रीय आदर्श वेद विद्यालय

महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन (म.प्र.)

(शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण, पो. ऑ. जवासिया, उज्जैन - ४५६००६ (म.प्र.)

Phone : (0734) 2502266, 2502254, E-mail : msrvvpujn@gmail.com, website - www.msrvvp.ac.in